राधास्वामी दयाल की दया राधास्वामी सहाय।

राधास्वामी मत संदेस।

जो लोग कि सच्चे खोजी सत्त पद के हैं और अपने जीव के पूरे और सच्चे उद्धार के वास्ते दर्द के साथ सच्ची ख़्वाहिश रखते हैं यानी सच्चे परमार्थी हैं और दुनिया की तरफ़ से उनके दिल में किसी क़दर उदासीनता है उनके वास्ते सत्त मत का भेद इस बचन में कहा जाता है॥

राधास्वामी मत क्या है।

१--राधास्वामी मत को संत मत कहते हैं और यही मत सत्त मत है यानी सत्त पद को लखाता है और उसका भेद समझाता है॥

राधास्वामी नाम की सिफ़त।

२.--राधास्वामी नाम कुल्ल और सच्चे मालिक का नाम है जो ईश्वर परमेश्वर और ब्रह्म पारब्रह्म और आत्मा परमात्मा और खुदा और निर्वान पद सब का निज कर्ता है॥

३—यह नाम किसी का धरा हुआ नहीं है इसको कुल्ल मालिक ने मेहर और दया से आप प्रगट किया यानी यह नाम ऊंचे देश में बग़ैर मदद ज़बान या बाजे के आप बोल रहा है और उस धुन को बड़भागी अभ्यासी अपने घट में सुनते हैं ॥

४—जो कोई इस नाम को उसके नामी और धाम और वहाँ पहुंचने के रास्ते का भेद लेकर प्रेम के साथ गावेगा या उसका सुमिरन या ध्यान करेगा या चित लगाकर उसकी धुन को अंतर में सुनेगा वही कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया और सतगुरु की कृपा से भौसागर के पार जावेगा और परम आनन्द को प्राप्त होकर काल के कलेश और जनम मरन के दुक्खों से बच जावेगा ॥

अर्थ राधास्वामी नाम के ।

५—राधा नाम आदि सुरत यानी आदि धुन का है जो आदि शब्द से प्रगट हुई और स्वामी नाम कुल्ल मालिक यानी आदि शब्द का है ॥

६—शब्द यानी आवाज़ प्रथम ज़हूर यानी प्रकाश कुल्ल का है और यही सब रचना का कर्ता है ॥

७—या इस तरह समझो कि राधा यानी धुन उस चेतन्य धार का नाम है जो अनामी पुर्ष स्वामी से आदि में प्रगट हुई और उसी को आदि सुरत कहते हैं और स्वामी नाम उस पुर्ष यानी कुल्ल मालिक का है जो अकह और अपार और अनंत और अगाध

और अनाम है और जिसके चरनों से धारा यानी धुन आदि में प्रगट हुई ॥

८–आदि धारा यानी धुन अथवा आदि सुरत कुल्ल रचना की कर्ता है और इस वास्ते वही कुल्ल रचना की माता है और स्वामी यानी आदि शब्द कुल्ल रचना का पिता है ॥

९–जब यह धुन या धारा उलट कर स्वामी या शब्द की तरफ़ मुतवज्जह होवे तब इस धारा का नाम राधा और आशिक़ यानी प्रेमी और भक्त है और शब्द यानी स्वामी प्रीतम और माशूक़ है ॥

१०–जब तक कि यह धारा या धुन जारी है तब तक वह और शब्द दो समझे जाते हैं और जब कि वह धारा उलट कर शब्द यानी स्वामी में समा जावे तब एक हो गये यानी दो का फ़र्क़ जाता रहा ॥

खुलासा हाल रचना का ।

११–जो धारा कि आदि में प्रगट हुई वह उतर कर किसी क़दर फ़ासले पर ठहरी, और वहाँ उसने मंडल बाँध कर रचना करी । इस स्थान को नाम अगम लोक है और जो धारा कि वहाँ आकर ठहरी उसका नाम अगम पुर्ष है यानी राधास्वामी दयाल के तख़्त का स्थान है ॥

१२–जब अगम लोक की रचना हो गई तब वहाँ से भी धारा प्रगट होकर नीचे उतरी और किसी

क़दर फ़ासले पर ठहर कर और वहाँ मंडल बाँध कर उसने रचना करी। इसका नाम अलख लोक है और उस धारा का नाम अलख पुर्ष है॥

१३--अलखपुर्ष से भी धारा प्रगट होकर और पहिले दस्तूर के मुवाफ़िक़ नीचे उतर कर जहाँ ठहरी और उसने मंडल बाँध कर रचना करी उसका नाम सत्त-पुर्ष और सत्तलोक है॥

१४--यहां तक निर्मल चेतन्य यानी रूहानी रचना हुई और राधास्वामी दयाल आप इन स्थानों में व्यापक और मौजूद हैं। यहाँ काल कलेश और दुक्ख और दर्द और जनम मरन नहीं है। यह सब स्थान दयाल देश या संत देश या निर्मल चेतन्य के देश कहलाते हैं यहाँ का प्रकाश स्वेत रंग है॥

१५--बहुत अरसे तक इसी क़दर रचना होकर रह गई और यहां की बासी सुरतें हंस कहलाती हैं और अनन्त दीप रूहानी इन लोकों के गिर्द में पैदा किये गये उन में हंस रहते हैं और अमी का अहार और पुर्ष के दर्शन का बिलास करते हैं॥

१६--ऊपर जो धारा का ज़िकर लिखा गया है वह धारा निहायत सूक्ष्म है कि किसी तरह नज़र नहीं आ सक्ती और न कुछ उसका आकार मालूम हो सक्ता है जैसे चुम्बक पत्थर को जब लोहे के छोटे २ टुकड़ों के सामने लाओ तो वह लोहे के टुकड़ों को अपनी धार के वसीले से खींचता है पर वह धारा उससे निकलती हुई बिल्कुल मालूम नहीं होती है।

यह दृष्टान्त भी सर्व अंग करके दुरुस्त नहीं है लेकिन सिर्फ़ धारा की सूक्ष्मता समझाने के लिये दिया गया है ॥

१७–सत्तलोक के मंडल के नीचे जो चेतन्य था वह श्याम रंग के गुबार से ढका हुआ था और जिस क़दर कि सत्तलोक से दूरी होती गई वह गुबार भी बढ़ता गया जैसे किसी चीज़ पर तह पै तह चढ़ी हुई होती हैं ॥

१८–सत्तलोक के नीचे से श्याम धारा भूरे रंग की प्रगट हुई और यह धारा भी चेतन्य थी जैसे कि ऊपर के लोकों की धारा चेतन्य है । इस धारा ने सत्तपुर्ष से बिन्ती करके आज्ञा मांगी कि सत्तलोक के मुवाफ़िक़ रचना करे तब उसको हुक्म हुआ कि नीचे के देश में जाकर रचना करे । इस धारा का नाम निरंजन यानी काल पुर्ष है और नीचे उतर कर यानी ब्रह्मांड में इसी का नाम पारब्रह्म और ब्रह्म हुआ ॥

१९–यह श्याम धारा नीचे उतरी पर वह मंडल बांध कर जैसे ऊपर की धाराओं ने रचना करी ऐसी रचना न कर सकी तब उसने सत्तपुर्ष से फिर बिनती करके मदद मांगी तब सत्तलोक से दूसरी धारा ज़र्द रंग प्रगट करके नीचे उतारी गई यह धारा सुरतों का भंडार लिये हुये आई और फिर इसने और पहिली श्याम धारा ने मिल कर नीचे के देश में रचना करी । इस धारा का नाम जोत और आद्या है और नीचे के देश यानी ब्रह्मांड में इसी का नाम माया हुआ ॥

२०—पहिले इन दोनों धारों ने ब्रह्मांड की रचना करी यानी ब्रह्म सृष्टी करी। इस देश में गुबार किसी क़दर साफ़ और सूक्ष्म था इस सबब से यहां की रचना भी सूक्षम हुई॥

२१—सत्तलोक के नीचे एक स्थान यानी लोक रचा गया कि जिसको दयाल देश का द्वारा समझना चाहिये और उसके नीचे एक भारी मैदान है जिसको महासुन्न कहते हैं और वह दयाल देश और ब्रह्मांड यानी ब्रह्म और माया देश के बीच में हद्द के तौर पर है॥

२२—फिर इसके नीचे तीन स्थान निरंजन और जोत ने रचे जो ब्रह्मांड की हद्द में शामिल हैं। नीचे के स्थान को सहसदलकंवल कहते हैं और जहाँ निरंजन और जोत का स्वरूप प्रगट है और यही स्थान सब मतों का जो दुनिया में जारी हैं सिद्धान्त पद है यानी इसके ऊपर का हाल किसी मत की किताबों में नहीं लिखा है सिर्फ़ जोगेश्वर ज्ञानी ब्रह्मांड की चोटी तक यानी सहसदलकंवल के ऊपर दो मुक़ाम तक गये पर वहाँ का भेद उन्हों ने गुप्त रक्खा कहीं २ इशारे में वर्णन किया लेकिन ब्रह्मांड के परे कोई नहीं गया सिवाय संत सतगुरु के जोकि सत्तलोक से आये और कुल्ल रचना के भेद से आपही वाक़िफ़ थे॥

२३—सहसदलकंवल से तीन धार सत, रज, तम, जिनको गुन और भी ब्रह्मा विश्नु और महादेव कहते हैं पैदा हुईं और इन धारों ने नीचे के देश की रचना करी जिसको पिंड कहते हैं और जिस में छः चक्र शामिल हैं ॥

२४—इस रचना में देवता और मनुष्य और पशू और बाक़ी कुल्ल रचना चारों खान की शामिल है। यहाँ गुवार भारी था यानी स्थूल माया थी इस सबब से यहाँ की रचना भी स्थूल हुई ॥

२५—और चार खानों के नाम यह हैं। (१) जेरज जो झिल्ली में लिपटे हुए पैदा होवें (२) अंडज जो अंडे से पैदा होवें (३) स्वेदज जो पानी और पसीने से पैदा होवें (४) उपमज जो ज़मीन से पैदा होवें जैसे दरख़्त वनस्पती वग़ैरः और भी जो खान से पैदा होवें ॥

२६—इस दरजे में सूक्ष्म और स्थूल शरीर के साथ पाँच दूत (१) काम (२) क्रोध (३) लोभ (४) मोह और (५) अहंकार, और चार अंतःकर्ण (१) मन (२) चित (३) बुद्धि (४) अहंकार, और दस इन्द्री यानी पाँच ज्ञान इन्द्री (१) आँख (२) कान (३) नाक (४) ज़बान रस लेने वाली (५) और तुचा यानी खाल और पाँच करम इन्द्री (१) हाथ (२) पांव (३) ज़बान बोलने वाली (४) पेशाब की (५) और पाख़ाने की इन्द्री बतौर औज़ारों के वास्ते काररवाई उन शरीरों

के सूक्ष्म और स्थूल रचना के लोकों में शामिल हुए ॥

२७--और इन लोकों में यानी सूक्ष्म और स्थूल लोक में माया ने अनेक तरह के भोग इन सब इन्द्रियों के पैदा किये और उन भोगों से मन और इन्द्री अपना भोग बिलास कर रहे हैं ॥

२८--सुरत की धार जो ऊंचे देश से आई वह पहिले मन को चेतन्य करती है और मन के स्थान से जो धार सुरत और मन की मिलौनी से उठती है वह इन्द्रियों को चेतन्य करती है और इन इन्द्रियों के द्वारे वही धार भोगों और पदार्थों में शामिल हो कर उनका रस उन्हीं इन्द्रियों के वसीले से मन को देती है। यह कार्रवाई स्थूल देह में बैठ कर सुरत और मन इन्द्रियों के वसीले से इस देश में कररहे हैं ॥

बर्णन जौहर सुरत और मन और उनके स्थान का पिंड में ॥

२९--अब समझना चाहिये कि सुरत की धार दयाल देश से आई और वह सतपुर्ष राधास्वामी की अंस है। अंस के अर्थ टुकड़े के नहीं हैं। अंस कहने से सिर्फ़ यह मतलब है कि सुरत वही जोहर है जो कुल्ल मालिक का जोहर है और वह कुल्ल मालिक सब जगह मौजूद है पर एक देश में प्रगट और बे परदे और बाक़ी देश में गुप्त यानी परदा या तह से ढका हुआ है और यह परदा या तह जिस क़दर कि प्रगट देश से दूरी होती गई बढ़ते गये जैसे कि प्याज़ के ऊपर या केले

के दरख़्त पर तह पै तह चढ़ी होती हैं और हर एक अंतरी तह या परदा बाहर की तह या परदे से मुलायम और साफ़ और सूक्ष्म होता है। इसी तरह यह तह या परदे गुबार यानी माया के उस चेतन्य पर चढ़े हुये हैं और पहिला परदा या तह निहायत लतीफ़ और सूक्ष्म और दूसरा उससे कम लतीफ़ और तीसरा उससे कम लतीफ़ है। ऐसेही स्थूल माया के देश में स्थूल यानी मोटी तह या परदे हैं और सुरत उनके अंदर गुप्त है॥

३०—और प्रगट और गुप्त का हाल थोड़ा बहुत इस दृष्टान्त से समझ में आवेगा। जैसे कि इस लोक में पानी एक देश यानी समुद्र में प्रगट है और बाक़ी देशों में यानी ज़मीन पर गुप्त है यानी तह या परदों से ढका हुआ है। कहीं वह तह या परदा पाँच चार हाथ मोटा कहीं दस बीस हाथ कहीं चालीस पचास हाथ और कहीं इससे भी ज़्यादा मगर पानी हर जगह मौजूद है और बग़ैर परदा या तह के हटाये उसका दर्शन या उससे कुछ कार्रवाई मुमकिन नहीं है॥

३१—दूसरी धार निरंजन से (जिसका स्थान ब्रह्मांड में है और वह नीचे के देश में भी व्यापक है) निकली और इसका नाम मन हुआ और मन उस को कहते हैं कि जिसमें फुरना होवे यानी तरंग और ख़्याल उठे। यह नीचे के देश में दरजे बदरजे स्थूल होता गया और यही इन्द्रियों का प्रेरक है॥

३२--तीसरी धार माया से निकली। इस माया का स्थान भी ब्रह्मांड में है और वही सब नीचे के देश में मौजूद है और यह भी दरजे बदरजे मुवाफ़िक़ परदों के स्थूल यानी कसीफ़ होती गई इस के मसाले से तन और इन्द्री वग़ैरः बनी और यह सुरत की शक्ती से चेतन्य हैं जिस शक्ती की धार मन के वसीले से पिंड में फैलती है॥

३३--सुरत की असली बैठक पिंड में दर्मियान दोनों आँखों के जो अंदर की तरफ़ तिल है उसमें है और इसी स्थान से तमाम पिंड में फैली है और जाग्रत के वक़्त दोनों आँखों में नशिस्त है। जब सुरत की धार अन्दर और ऊपर की तरफ़ खिंच जाती है उस वक़्त देह और इन्द्रियाँ बेकार हो जाती हैं यानी तमाम कारंवाई उनकी बन्द हो जाती है॥

३४--मनकी बैठक ख़ास कर सीनह के नीचे कौड़ी के मुक़ाम पर है और वहीं से धार इन्द्रियों में आती है और भी तमाम देह में फैलती है लेकिन जब तक सुरत की धार ऊपर से मन के स्थान पर न आवे तब तक यह कुछ कारंवाई नहीं कर सक्ता है॥

३५--माया की धार से जोकि जगह २ स्थूल रूप हो गई पिंड के अंग २ बने हैं और वही कुल्ल देह में व्यापक है॥

बयान हालत खिंचाव सुरत का

३६--जब आदमी की पुतली आँख की खिंच जाती है वह फ़ौरन बेहोश हो जाता है और देह बेकार हो

जाती है और मन और इंद्रियाँ भी बेकार हो जाती हैं ॥

३७--इसी तरह जब ज़्यादा खिंचाव उस धार का हो जाता है तब आदमी मर जाता है और जो थोड़ा सा खिंचाव हुआ तब बेहोश हो जाता है या नींद आ जाती है और इस तरफ़ से गाफ़िल हो जाता है॥

३८--इस से साबित हुआ कि तमाम कार्रवाई बदन की सुरत की धार के आसरे है और इस धार का ऊपर से यानी दिमाग़ से आँखों में और फिर तमाम देह में उतरना और फैलना और फिर आख़ीर वक़्त पर इसी रास्ते से यानी आँख के मुक़ाम से अंदर और ऊपर की तरफ़ होकर चले जाना और पिंड का छोड़ना साफ़ इन आँखों से नज़र आता है क्योंकि मरते वक़्त पाँव की उंगलियों से खिंचाव उस धार का शुरू होकर रफ़्ता २ ऊपर की तरफ़ को चलता जाता है और जब पुतली उलट गई यानी खिंच गई तब पिंड की मौत हो जाती है ॥

३९--और यह बात भी इस बयान से साबित हुई कि जब सुरत जागृत के वक़्त आँखों में बैठती है उस वक़्त देह और दुनिया का दुख सुख और चिन्ता और फ़िक्र व्यापता है और जब अन्दर की तरफ़ थोड़ी बहुत खिंच गई उस वक़्त न देह की ख़बर रहती है और न दुनिया की और उनका दुख सुख भी नहीं व्यापता है। देखो जब डाक्तर लोग शीशी सुंघाते हैं उस वक़्त सुरत यानी रूह की धार हट जाती है फिर बदन काट डालते हैं और कुछ ख़बर

नहीं होती इससे साफ़ ज़ाहिर है कि देह और इंद्रियाँ जड़ हैं और सुरत चेतन्य है उसकी चेतन्यता से यह भी चेतन्य होते हैं और जब उससे यानी सुरत से सम्बन्ध ढीला हो जाता है या टूट जाता है उस वक्त यह देह और इंद्रियाँ बेकार या मुर्दा हो जाती हैं ॥

४०—ऊपर के बयान से ज़ाहिर होता है कि जो कोई जीते जी दुख सुख संसार और देह से बचाव चाहे तो वह ऐसी तरकीब करे कि जिससे जब चाहे जब वह अपनी सुरत को आँख के स्थान से अन्दर और ऊपर की तरफ़ जिस क़दर मुनासिब और ज़रूर समझे खींच ले जावे तब उसको तकलीफ़ और आराम देह और दुनिया से बचाव हो सक्ता है ॥

रचना के तीन दरजों का बयान ।

४१—संतों ने कुल्ल रचना को तीन बड़े दर्जों में तक़सीम किया है और वह तीन दरजे यह हैं—

(१) पहिला दरजा जिसमें निर्मल चेतन्य यानी सिर्फ़ रूह का मंडल है और वहाँ के लोक और उन लोकों में सब रचना रूहानी यानी चेतन्य लतीफ़ है और यह मंडल दयाल अथवा संत देश कहलाता है ॥

२—दूसरा दर्जा इस पहिले दर्जे के नीचे से जैसा कि ऊपर बयान हो चुका है ग़ुबार यानी माया का ज़हूर हुआ जितने रंग हैं लाल से लगा कर नीले यानी काले रंग तक सब मन और माया के रंग हैं। इस दरजे में सूक्ष्म यानी लतीफ़ माया निर्मल चेतन्य

को तह या गिलाफ़ के तौर पर ढके हुये है यानी लतीफ़ माया की देहियाँ तैयार होकर और उस में रूह बैठ कर उस देश में कार्रवाई करती है। यह दर्जा ब्रह्मांड कहलाता है।

(३) तीसरा दरजा इस दरजे में निर्मल चेतन्य पर सिवाय सूक्ष्म माया के गिलाफ़ों के स्थूल माया की तहें चढ़ी हुई हैं और इसी सबब से यहाँ के लोक भी कसीफ़ और उनकी रचना भी निहायत कसीफ़ यानी स्थूल है। छः चक्र पिंड के इसी दर्जे में शामिल हैं॥

इस लोक में सुरत की हालत और क़ार्रवाई का बयान और उसके निकासी का जतन॥

४२--हमारा यह पृथ्वी लोक तीसरे दरजे में है और इसी सबब से यहाँ की रचना भी स्थूल है और यहाँ सुरत यानी रूह कितने ही परदे में गुप्त है। किसी दरख़्त का बीज लेकर देखो कि कितनी तह या छिलके उस पर चढ़े हुये हैं और फिर उनके अंदर मग़ज़ और मग़ज़ के भी किसी दरजे में उस बीज के रूह की बैठक है जहाँ से कि वक़्त पैदायश कुला फूटता है यानी प्रथम धार निकलती है और इन परदे या गिलाफ़ या तह को शरीर या देह कहते हैं॥

४३--इसी तरह आदमी की रूह भी कई परदों यानी शरीरों में गुप्त है। पहिला स्थूल शरीर,

दूसरा सूक्ष्म, और तीसरा कारन शरीर, और इन तीनों में हर रोज़ सुरत यानी रूह की आमदरफ़्त रहती है ॥

४४--ऊपर के बयान से ज़ाहिर है कि यह देश सुरत यानी रूह का नहीं है क्योंकि यह माया का देश है और यहां काल और माया प्रधान यानी ग़ालिब हैं और सुरत उनकी आधीन है। हरचन्द कि सब कार्रवाई इस देश में सुरत की धार की ताक़त से हो रही है पर सुरत का मुख यहां नीचे और बाहर की तरफ़ हो रहा है और इस सबब से उसकी धारें मन और माया से मिलकर जारी होती हैं और मन और माया का असर उसमें ज़बर रहता है। इस वास्ते जीव का झुकाव संसार और उसके भोगों की तरफ़ ज़्यादा रहता है ॥

४५--अब जब तक किसी मनुष्य को ऊपर के देश के बासी या उस तरफ़ के चलने वालों का संग न मिलेगा और वह उनसे भेद रास्ता और जुगत चलने की लेकर, इस देश और इस घाट यानी स्थान को आहिस्ता २ छोड़ना शुरू न करेगा तब तक सच्चे और पूरे तौर से मन और माया का ज़ोर कम न होगा और न उस मनुष्य की पुरानी आदतें और स्वभाव और ख़्वाहिशें और ब्यौहार जो संसारियों का संग करके पड़ गई हैं बदलेंगी ॥

४६--संग और तमाशा और तजुर्बा जिस सोहबत और जिस पेशे में जो कोई कि होवे, बड़ा भारी

असर रखता है यानी जैसे आदमी की सोहबत होगी और जैसे कुछ कि वह अपनी आँख से देखेगा और जो कुछ कि हालत उस पर बीतेगी, उसी मुवाफ़िक़ उस की रहनी और ब्यौहार और चाह होवेगी और जो चाह कि उसके मन में ज़बर होगी, उसी के पूरा करने के वास्ते यह मिहनत और तवज्जह के साथ जतन करेगा ॥

अमर और परम सुख की प्राप्ती के लिये जतन करना ज़रूर है और उसी का नाम सच्चा परमार्थ है ॥

१७--सब जीव दुनिया के सुखों के वास्ते मिहनत कर रहे हैं और दुखों के दूर करने के लिये तदबीर करते हैं पर इस दुनिया के जितने सुख हैं वे सब मन और इन्द्रियों के भोग हैं और नाशमान और तुच्छ और जड़ हैं और जिस किसी को यह सब सुख मिल भी गये तो एक दिन उनको ज़रूर मरने के वक्त छोड़ना पड़ेगा और जो उन्हीं की चाह मन में ज़बर रही और उमर भर यही काम करता रहा, तो उसी चाह और स्वभाव और आदत के मुवाफ़िक़ फिर जनम धरना पड़ेगा और इसी तरह हमेशा जनम मरन का चक्कर जारी रहेगा और दुख सुख भोगता रहेगा और चाहे जैसा जतन करे देही के दुख सुख से कभी निवृत्ती नहीं होवेगी ॥

४८--अब समझना चाहिये कि जिस क़दर सुख और ज्ञान और आनंद और रस हैं सब सुरत की धार के वसीले से मालूम होते हैं। जो वह धार शामिल न होवे या हट जावे तो यह सब सुख और आनंद और ज्ञान जाते रहैं और जब कि सुरत की एक २ धार में इस क़दर रस और आनंद है कि मनुष्य उसमें फंस रहे हैं, तब सुरत के भंडार में यानी उस रूहानी और निर्मल चेतन्य देश में जहाँ से कि सब सुरतें आई हैं, किस क़दर रस और आनंद और सुख और ज्ञान होवेगा॥

४९--इस वास्ते हर एक मनुष्य को चाहे पुरुष होवे या स्त्री मुनासिब है कि उस परम आनंद की प्राप्ती के लिये थोड़ा बहुत जतन ज़रूर करे और जिस क़दर वह जतन करता जावेगा, इस नीचे के देश से ऊंचे देश में चढ़ कर बिशेष सुख भोगता जावेगा और रफ़्ता २ एक दिन परम और अमर आनंद के भंडार में पहुंच जावेगा और वहां पहुंच कर आप भी अमर हो जावेगा और वह देश भी जो निर्मल चेतन्य का भंडार है अमर है और वहां का सुख भी अमर है॥

५०--जो कोई इस बात को नहीं मानेगा वह इसी नीचे देश में पड़ा रहेगा, और बारम्बार ऊंची नीची जोनौं में, और ऊंचे नीचे देशौं में देह धरकर दुख सुख भोगता रहेगा और अपनी करनी और करम के मुवाफ़िक़ उन जोनौं में फल पावेगा॥

५१—सिवाय इसके मनुष्य में तीन क़िस्म की ताक़तें मौजूद हैं। पहिली देह और इंद्रियों की, दूसरी मन और बुद्धि की और तीसरी सुरत रूह की। जो कोई इन तीनों ताक़तों को मथन करके जगावे, वह सब में श्रेष्ट कहलावे और ऊंचे दरजे में पहुंच सक्ता है और मालिक के भेद को जान सक्ता है और जो एक २ ताक़त को सिर्फ़ जगावेगा, वह उसी मुवाफ़िक़ फ़ायदा उठावेगा लेकिन जो सुरत की ताक़त को मथन यानी अभ्यास करके जगावेगा, उसकी बराबरी कोई नहीं कर सकेगा, वह ख़ुद मालिक का प्यारा हो जावेगा और सब रचना उसकी फ़र्मांबरदारी करेगी॥

५२—अब समझो कि जिसने देह और इंद्री की क़ूवतें भी नहीं जगाईं वह सिर्फ़ कुली या हल जोतने का काम करके, मुश्किल से अपना और अपने कुटुंब का पेट भरेगा और हैवानों के मुवाफ़िक़ नादान रहेगा और जिसने कि यह क़ूवतें जगाईं, जैसे सीने, लिखने, तसवीर खींचने, गाने बजाने वग़ैरः का काम सीखा वह किस क़दर फ़ायदा अपनी मिहनत से उठा सक्ता है॥

५३—और जिसने अक़ली और इल्मी क़ूवत को मदर्से में अभ्यास और मश्क़ करके जगाया, वह देखो किस क़दर बड़ा दरजा हाकिमी व डाक्तरी व जज्जी व मुनसफ़ी व आनरेरी वग़ैरः का पाता है और अपनी मिहनत और कार्रवाई से किस क़दर ज़्यादा फ़ायदा

उठाता है और किस क़दर मान बड़ाई उसकी होती है और हज़ारों लाखों आदमी पर हुकूम चलाता है ॥

५४–और जिसने अपनी सुरत यानी रूह की ताक़त को अभ्यास करके जगाया, जैसे कबीर साहब और गुरू नानक साहब जो संत हुये और कृष्ण महाराज और रामचंद्र और बौध जी औतार और व्यास और बसिष्ठ जी वग़ैरः महात्मा और हज़रत ईसा और हज़रत महम्मद और २ पैग़म्बर और औलिया वग़ैरः उनकी किस क़दर महिमा और शोहरत हुई, कि औरत और मर्द और बच्चे अनेक देशों में उनके नाम की ताज़ीम करते हैं और उनकी बानी और बचन को अपनी मुक्ती का वसीला समझते हैं और कैसे भाव और प्यार के साथ उनकी पूजा और यादगारी करते हैं बावजूदे कि उनको सैकड़ों और हज़ारों बर्ष गुज़र गये, मगर उनका नाम और बानी बदस्तूर लोगों के दिलों में ताज़ा असर करती है ॥

५५–अब समझना चाहिये कि हर एक औरत और मर्द पर फ़र्ज़ है, कि थोड़ा बहुत तीनों कूवतों को अभ्यास करके जगावे ॥

५६–और ऐसा नहीं करेंगे तो यह कूवतें उन में जैसी सोती आईं वैसे ही सोती रहेंगी और वे उनके जगाने से जो फ़ायदा हासिल होना मुमकिन है, उससे महरूम और अभागी रहेंगे ॥

५७–इन सब में से रूह यानी सुरत की कूवत को तो ज़रूर थोड़ा बहुत जगाना हर एक मनुष्य को

लाज़िम और फ़र्ज़ है, कि उसमें उसके जीव रूह का कल्यान, और मालिक के देश में पहुंच कर परम आनंद का प्राप्त होना मुमकिन है और नहीं तो हमेशा अंधेरे यानी माया के घेर में पड़ा रहेगा और देहियों के साथ दुख सुख और जनम मरन की तकलीफ़ भोगता रहेगा ॥

५८—सिवाय इसके दफ़ा ३६, ३७, ३८, ३९, ४० के पढ़ने से मालूम होगा कि सुरत रूह मरने के वक़्त आंख के रास्ते होकर जाती है, यानी जब पुतली उलट जाती है उस वक़्त मौत हो जाती है। अब हर एक मनुष्य को चाहे स्त्री होवे या पुरुष, ज़रूर और मुनासिब है, कि अपने मरने के वक़्त से पहिले इस रास्ते को जिस क़दर बन सके खोले यानी तै करे, और वहां की रचना और क़ुदरत और कैफ़ियत अपनी आंखों से देख ले और जो ऊपर की तरफ़ चलने में आनंद और सरूर ज़रूर ज्यादा से ज्यादा मिलता जावेगा, उस का भोग मन और रूह के साथ थोड़ा बहुत इस ज़िंदगी में करे तब अख़ीर वक़्त पर और भी किसी भारी तकलीफ़ या दुख या चिन्ता के समय उसको रंज बहुत कम होगा और ऐसे वक़्त पर अपने अंदर की तरफ़ तवज्जह करने से फ़ौरन् किसी क़दर फ़ायदा मालूम होवेगा ॥

५९—ऐसे अभ्यासी को कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया और मेहर और उनके अंग संग और हाज़िर नाज़िर होने का सबूत अपने अंतर में मिल

कर दिन २ प्रेम और प्रतीत चरनों में बढ़ती जावेगी और दुनिया के काम भी उसके सहज में कुल्ल मालिक की मौज के मुवाफ़िक़ सरंजाम पावेंगे और उसके मन में सहज उदासीनता संसार और उसके पदार्थों की तरफ़ से होती जावेगी और भक्ति बढ़ती जावेगी कि जिससे यह अपना सच्चा उद्धार होता हुआ जीते जी आप देखता जावेगा ॥

६०—सच्चा परमार्थ इसी का नाम है कि अपने घट में जिस रास्ते होकर सुरत रूह राधास्वामी देश से उतर कर पिंड में आकर ठहरी है उसी रास्ते से उसको चलाकर उसके निज देश में पहुंचाना और अपने सच्चे माता पिता राधास्वामी दयाल के चरनों में पहुंच कर उनके दर्शन के बिलास का आनंद लेना ॥

६१—संत मत में कुल्ल मालिक की महिमा और पूजा है और वह पूजा ज़ाहिरी नहीं है उसका भेद लेकर उस से मिलने का जतन करना यही पूजा है और उसके चरनों में दिन २ प्रीत और प्रतीत का बढ़ाना यही उसकी भक्ति है ॥

और जोकि सच्चा और कुल्ल मालिक सब जगह मौजूद है और मनुष्य इस लोक में सब से श्रेष्ठ यानी उत्तम है फिर मनुष्य के चोले में उसका प्रकाश बनिस्बत और रचना इस लोक के ज़्यादा प्रगट है इस वास्ते जो कोई उससे मिलना चाहे या उसका प्रकाश और जलवा देखना चाहे उसको मुनासिब है कि

अपने घट में उसका पता और भेद लेकर खोज करे क्योंकि मनुष्य का चोला कुल्ल रचना का नमूना है और इस चोले में जो कुछ कि बाहर रचना है वह सब छोटे स्केल पर मौजूद हैं जैसे कि एक तसवीर बड़ी और एक उसी की नक़ल छोटी दोनों में बराबर सब आकार बड़े और छोटे के हिसाब से मौजूद हैं ॥

६२—बाहरमुख पूजा जिस क़दर कि है वह नक़ल की है या मनुष्य से कमतर दरजे की रचना की है यह दोनों असल से बहुत दूर हैं और जो इनका सिलसिला असल से नहीं लगा हुआ है यानी असल का भेद जो घट में है नहीं मालूम है और न उसके मिलने की तरकीब की ख़बर है तो वह सब पूजा वृथा और फ़ुज़ूल है क्योंकि उस काम के करने से कभी असल नहीं मिलेगा जब तक कि भेदी से उसका भेद लेकर वह जुगत कि जिस से मेला होवे अपने अंतर में कमाई न जावे ॥

६३—और वह भेद और जुगत यानी तरीक़ा अभ्यास का इस वक़्त में सिर्फ़ राधास्वामी मत में मिल सक्ता है और किसी मत में उस भेद और तरीक़े का ज़िकर भी नहीं है और वह जुगत ऐसी है कि लड़का जवान बूढ़ा चाहे स्त्री होवे या पुरुष उसको आसानी के साथ बग़ैर किसी ख़तरे या विघन के कमा सक्ते हैं ॥

६४—और मतों में प्राणायाम को सब में बढ़कर तरीक़ा या योग क़रार दिया है पर वह ऐसा मुश्किल और ख़तरनाक है कि बिरक्तों से भी उसका अभ्यास नहीं

बन सक्ता फिर बिचारे गृहस्थी और ख़ास कर औरतें तो उसके संजमों की निगाहदाश्त और प्राणों के रोकने और चढ़ाने का अभ्यास बिल्कुल नहीं कर सक्तीं और इस सबब से उनका उद्धार उन मतों के मुवाफ़िक़ मुतलक़ नहीं हो सकता ॥

६५–इन मतों के आचार्यों ने प्राण की धार पर सवार हो कर रास्ता ते करना बतलाया यानी प्राण योग का उपदेश किया पर संतो ने रूह सुरत की धार की सवारी तजवीज़ की । अब ख्याल करो कि रूह की धार बड़ी है, या प्राण की धार । सोते में प्राण की धार जारी रहती है मगर कुल्ल कार्रवाई मन और इन्द्रियों की बंद रहती है और जागृत में जब कि रूह की धार आँखों के मुक़ाम पर आकर ठहरी उस वक्त कुल्ल कार्रवाई तन मन और इन्द्रियों की जारी हो जाती हैं। इस से साफ़ ज़ाहिर है कि जो कोई रूह की धार पर सवार होकर घर की तरफ़ चलेगा वह सुखाला पहुंचेगा और जल्द मन और इन्द्री और तन उसके क़ाबू में आवेंगे और किसी तरह का ख़तरा और बिघन रास्ते में पैदा नहीं होगा और जो प्राण की धार के आसरे चलेगा उसको प्राणों का रोकना और चढ़ाना बग़ैर पाबंदी (बर्ताव) मुक़र्र किये हुये संजमों के जो कि निहायत कठिन और मुश्किल हैं और न गृहस्थ से बन सक्ते हैं और न बिरक्त से क़ितई नामुमकिन होगा । इस वास्ते यह रास्ता बिल्कुल बन्द हो गया और सिर्फ़ ज़बानी या तहरीरी बात चीत इस

अभ्यास की रह गई और जो बिलफ़र्ज़ किसी एक विरक्त से थोड़ा बहुत अभ्यास बना भी तो बाक़ी विरक्त और कुल गृहस्थियों से तो उसका बन आना नामुमकिन है, फिर ऐसे रास्ते के बयान करने से क्या फ़ायदा। किताबों में उसका ज़िकर लिखने और ज़बानी बयान करने से अभ्यास का फल नहीं मिल सक्ता है॥

६६--इस वास्ते जो अभ्यास कि संतों ने बताया है उसका मानना और उसके मुवाफ़िक थोड़ी बहुत कार्रवाई करना हर एक को चाहे औरत होवे या मर्द मुनासिब और ज़रूर है क्योंकि बग़ैर उसके दुनिया और देह के सुख दुख और जनम मरन के सख़्त दुक्खों से बचाव किसी तरह मुमकिन नहीं और न सच्चा और पूरा उद्धार या मुक्ती हासिल हो सक्ती है॥

बर्णन कैफ़ियत सुरत शब्द अभ्यास की

६७--इस अभ्यास का नाम सुरत शब्द योग है यानी सुरत रूह को शब्द के साथ मिलाकर चढ़ाना और शब्द नाम सिर्फ़ आवाज़ का नहीं है बल्कि चेतन्य की धार से मतलब है क्योंकि जहां धार रवाँ है वहाँ उसके साथ आवाज़ भी बराबर होती है धार नज़र नहीं आती पर आवाज़ से उसकी पहिचान होती है जैसे आदमी का असली रूप यानी उसकी सूरत रूह की कैफ़ियत नज़र नहीं आती पर आदमी के बोलने से मालूम होता है कि रूह सुरत उसमें मौजूद है और

कारवाई कर रही है कुल्ल रचना में शब्द के वसीले से कारवाई हो रही है और यह शब्द निशान और ज़हूरा चेतन्य का है जहां शब्द नहीं वहां चेतन्य भी नहीं यानी गुप्त है॥

६८—सुरत चेतन्य को शब्द चेतन्य से मिलाने का मतलब यह है कि सुरत जो उस शब्द की धार है उसको अपने घर की तरफ़ आवाज़ की डोरी को पकड़ के उलटाना और आवाज़ की बराबर कोई अंधेरे में उजाला करने वाला और रास्ता दिखलाने वाला नहीं है। जब कि कोई आदमी अंधेरी रात में जंगल में रास्ता भूल जावे और उस वक्त बसबब छाये होने बादल के किसी क़िस्म की रोशनी चांद तारागन बिजली और मशाल वग़ैरः की नहीं है तो जो आवाज़ आदमियों की किसी नज़दीक के गांव से आती होवे उसको पकड़ के भूला हुआ आदमी गांव में पहुंच सक्ता है॥

६९—इसी तरह यह आवाज़ अनाहद शब्द की जो घट २ में पूर है और बग़ैर मदद ज़बान या किसी बाजे के हर वक्त जारी है ऊंचे से ऊंचे देश यानी कुल्ल मालिक के दरबार से आ रही है और एक २ रास्ते के स्थान पर ठहर कर और फिर उस धार के वसीले से जो वहाँ से निकली है बरामद (निकली) होकर कुछ तबदीली के साथ बराबर ऊपर से नीचे के मुकाम तक जारी है। और कुल्ल देह और रचना

भर में फैली हुई है। जो कोई इस आवाज़ का भेद और पता यानी स्थान २ के शब्द का हाल भेदी से दरियाफ़्त करके अपने मन और चित से उसको सुनता हुआ आँखों के रास्ते से चलना शुरू करे वह दिन २ उस स्थान के जहाँ से कि पहिली आवाज़ आ रही है नज़दीक पहुंचता जावेगा और फिर वहां से दूसरे शब्द को पकड़ के चलेगा। इसी तरह सब मंज़िलें रास्ते की तै करता हुआ एक दिन कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के देश में जा पहुंचेगा॥

७०--मालिक कुल्ल अरूप और विदेह है उसका ध्यान किसी तरह कोई नहीं कर सक्ता है। पर शब्द के वसीले से जो उस मालिक के चरनों से जारी हुआ है अभ्यासी ध्यान करता हुआ पहुंच सक्ता है क्योंकि शब्द उस मालिक का प्रथम ज़हूरा और निशान है और जैसे कि वह मालिक अरूप है शब्द भी अरूप है पर ध्यान में बहुत भारी मदद देता है। यानी ध्याता को उसके इष्ट के पास पहुंचाता है। इसी तरह अरूप का ध्यान करके अभ्यासी उस अरूप पद में पहुंच सक्ता है और कोई रास्ता या तरकीब पहुंचने की ऐसी आसान और बेख़तरा और निश्चय करके सीधी राह से पहुंचाने वाली क़तई नहीं है क्योंकि रूह की धार जो शब्द की धार है उससे बढ़ कर और कोई धार नहीं रची गई है वह और सब धारों की कर्ता और चेतन्य करने वाली है ख़ुद प्राण की धार भी

रूह यानी जान की धार से चेतन्य है फिर सुरत शब्द से बढ़कर और कोई जुगत न रची गई और न हो सक्ती है ॥

७१--यह बात सबको मालूम होवेगी कि सुरत रूह का आवाज़ के साथ प्यार और इश्क़ ज़ाती यानी असूली है। जैसे कोई आदमी कैसेही ज़रूरी काम के वास्ते जाता होवे और जो कहीं रास्ते में उम्दा गाना बजाना होता होवे तो ज़रूर थोड़ी देर के वास्ते वहाँ ठहर कर उसको शौक़ से सुनेगा बल्कि सिर्फ़ आदमी ही नहीं जानवर भी उमदा बाजे और रसीली आवाज़ के आशिक़ हैं और उसको बड़ी तवज्जह के साथ एकाग्र चित्त होकर सुनते हैं और खुश होते नज़र आते हैं। सबब इसका यही है कि सुरत का भंडार शब्द है और यह आप भी आवाज़ स्वरूप है और इस वास्ते आवाज़ के साथ इसकी प्रीति या इश्क़ ज़ाती और असूली है। रसीली आवाज़ सुन कर सुरत और मन मस्त हो जाते हैं और गाने या बाजा बजाने वाले के संग २ फिरते हैं और कभी खुशी में भर कर नाचने लगते हैं और ज़्यादती सरूर में बेहोश हो जाते हैं ॥

७२--जिस किसी को सच्चा शौक़ होवे इस अभ्यास का चंद रोज़ यानी एक महीने पन्द्रह रोज़ इम्तिहान और परीक्षा करके आप देख ले क्योंकि यह राधा-स्वामी मत करनी का है बातों और विद्या बुद्धि की

चतुराई का नहीं है विद्यावान अपनी बुद्धि के अहंकार में संतों के बचन को ग़ौर और फ़िक्र के साथ बिना पक्षपात के न सुन कर कोरे रह गये और उनको सच्चे मालिक का या उसके मिलने के रास्ते और तरीक़े का पता न लगा सिर्फ़ बातों में संतोष करके थक रहे और अहंकार किया कि उनकी बराबर कोई कुछ नहीं जानता है और हक़ीक़त में असल भेद कुल्ल मालिक और जीव यानी सुरत और शब्द की धार से बिल्कुल बेख़बर हैं ॥

७३--जो सच्चे खोजी और दर्दी लोग हैं और किसी मत या तरीक़े में उनका बंधन और पक्ष नहीं है और न अपनी विद्या और बुद्धी का ऐसा अहंकार रखते हैं कि हमने सब कुछ जान लिया और समझ लिया है वे राधास्वामी मत के अभ्यास के लायक़ हैं और वही राधास्वामी मत के हाल और भेद और अभ्यास की जुगत को सुन कर मगन होवेंगे और उसको दिलोजान से मानेंगे और उसके मुवाफ़िक़ करनी करके उसके फल को प्राप्त होंगे यानी अपनी ज़िंदगी में अपने सच्चे उद्धार और सच्ची मुक्ती का सबूत हासिल करेंगे और एक दिन सच्चे मालिक के देश में पहुंच कर उसके दर्शन का आनन्द लेवेंगे और जनम मरन और देह के दुख सुखों से बच जावेंगे ॥

राधास्वामी मत के अभ्यासी को प्रेम और सच्चे शौक़ की ज़रूरत और उस की महिमा ॥

७४–जितने काम दुनिया के हैं बग़ैर शौक़ या मुहब्बत के वह दुरुस्ती से नहीं बन सक्के हैं यानी जब तक कि उन में मन और इन्द्री पूरी तवज्जह के साथ शामिल नहीं होते हैं वह काम दुरुस्त नहीं होते फिर परमार्थ का खोज और अभ्यास बग़ैर पूरी तवज्जह के किस तरह दुरुस्त बन सक्ता है । इस वास्ते सच्चे परमार्थी को राधास्वामी मत में ज़रूर है कि प्रेम अंग लेकर सतसंग और अभ्यास करे तो उस में फ़ायदा मालूम पड़ेगा और नहीं तो उसकी काररवाई रूखे पन के साथ होवेगी और उस में रस कुछ नहीं आवेगा और न प्रीत और प्रतीत बढ़ेगी ॥

७५–जो प्रेम कि प्रतीत के साथ है उसके ठहराव का भरोसा ज़्यादा होता है और उसमें फ़ायदा भी ज़्यादा मिलेगा और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया भी ज़्यादा आवेगी और यह प्रतीत सतसंग करके हासिल होगी ॥

७६–सतसंग नाम गुरु या साध के संग का है और वह गुरू और साध संतमत अथवा राधास्वामी मत के पैरौ होना चाहिये । ऐसे सतसंग में सिवाय इन बातों के और किसी लड़ाई झगड़ा क़िस्सा बखेड़े

का ज़िकर न होगा (१) महिमा सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल की और भेद रास्ते और मंज़िलों का और जुगत रास्ता तै करने की (२) तरीक़ा बढ़ाने प्रेम प्रीत का राधास्वामी दयाल और गुरू के चरनों में (३) पैदा करना हालत उदासीनता का दुनिया और उसके भोगों की तरफ़ से अपने मन में (४) बर्णन उन बिघनों का जो मन और माया अभ्यासी के रोकने को पैदा करते हैं (५) हाल उस कैफ़ियत का जो अभ्यासी को हालत सतसंग और अभ्यास में मालूम होती है (६) और ज़िकर चढ़ाई सुरत का मुक़ामों पर और उसकी हालत वग़ैरह ॥

७७—सतसंग में बैठ कर और चित्त दे कर बचन सुनने से बहुत से संशय और भरम दूर होते हैं और बहुत सी चीज़ों में या बातों में जो भाव और पकड़ जीव की अर्से से चली आती है वह भी ढीली हो जाती है। इस तरह आहिस्ता २ जीव क़ाबिल अभ्यास करने सुरत शब्द योग के हो जाता है और जिन्हों ने कि सतसंग नहीं किया और सिर्फ़ अभ्यास की बड़ाई सुन कर और मत में शामिल हो कर यानी उपदेश ले कर उसकी कमाई करने लगे तो उन से अभ्यास जैसा चाहिये वैसा बन नहीं पड़ेगा और न रस आवेगा क्योंकि जब तक संशय और भरम दूर न होवें और अंतर में सफ़ाई न होवे तब तक

मन और सुरत सर्व अंग करके दुरुस्ती के साथ अ-भ्यास में नहीं लगते ॥

७८—इसी तरह जब कोई सतसंग में बैठ कर पहिचान कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और उनके धाम की और भेद रास्ते का और बड़ाई सुरत शब्द मारग की सुनेगा और बुद्धी से अच्छी तरह समझेगा तब उसके मन में संतों के बचन की थोड़ी बहुत प्रतीत आवेगी और जब उस प्रतीत के मुवाफ़िक़ थोड़ा बहुत अभ्यास करके रस और राधास्वामी दयाल की दया का परचा अपने अंतर में पावेगा, तब सच्ची प्रीत घट में पैदा होगी और प्रतीत बढ़ती जावेगी और फिर अभ्यास का भी शौक़ बढ़ता जावेगा ॥

७९—बग़ैर थोड़े बहुत ऐसे शौक़ और प्रीत और प्रतीत के रास्ता घट में तै करना और क़ुदरत की कैफ़ियत को देखना मुश्किल है क्योंकि जब तक कुछ भी शौक़ और प्रीत और प्रतीत दिल में नहीं आवेगी तब तक सुरत और मन और इन्द्रियाँ सिमट कर अभ्यास में नहीं लगेंगी और न उसमें रस आवेगा और इस सबब से अभ्यासी थोड़े दिन कुछ कारवाई करके उसको थक कर और निरास हो कर छोड़ देगा और संतों के बचन को रोचक समझ कर उनका निरादर करेगा ॥

८०—प्रेम या प्रीत खैंच शक्ती को यानी क़ूवत जाज़बा को कहते हैं। इसी शक्ती से तमाम रचना जो

कि छोटे २ ज़र्रे या परमानू से मिल कर रची गई है क़ायम है और कुल्ल देहियाँ या सूरतों का ठहराव और कार्रवाई इसी शक्ती के आसरे हो रही है। जो प्रेम न होवे तो कोई किसी से मेल न करे और न किसी काम में मन लगा कर उसकी कार्रवाई करे॥

८१--जब कि कुल्ल रचना की कार्रवाई प्रेम के आसरे जारी है बल्कि सब रचना प्रेम के वसीले से ठहरी हुई है तो परमार्थ की कार्रवाई जिस से सुरत अंश अपने अंशी यानी भंडार से मिलना चाहती है किस तरह बग़ैर प्रेम के जारी हो सक्ती है और क्योंकर बिना सच्चे शौक़ के इन दोनों का आपस में मेल हो सक्ता है॥

८२--कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल प्रेम का भंडार हैं और सुरत जो उनकी अंश या धार है वह भी प्रेम स्वरूप है इस वास्ते जब तक सुरत में प्रेम न प्रगट होगा तब तक उसका मेल अपने भंडार से नहीं होगा यानी रास्ता तै करके उस भंडार में पहुंचने की कार्रवाई (जिसको सुरत शब्द का अभ्यास कहते हैं) दुरुस्ती से नहीं बन पड़ेगी॥

८३--ऊपर के बयान से ज़ाहिर है कि जब तक पहिले सतसंग करके प्रीत और प्रतीत मन में नहीं आवेगी और संशय और भरम दूर न होवेंगे तब तक प्रेम पैदा न होगा। इस वास्ते हर एक सच्चे खोजी और दर्दी परमार्थी को मुनासिब और ज़रूर है कि

पहिले राधास्वामी मत के सतसंग में शामिल हो कर होशियारी से बचनों को सुन कर और समझ कर और अपने संशय और भरम दूर करके अभ्यास शुरू करे तब उसको उसका फ़ायदा जल्द मालूम होवेगा और आइंदा को दिन २ मुवाफ़िक़ उसकी लगन के तरक्क़ी होती जावेगी ।

राधास्वामी मत में पाप पुन्य यानी शुभ और अशुभ करम की शरह ॥

८४—राधास्वामी मत में शुभ और अशुभ करम यानी पुन्य और पाप की शरह ऐसे तौर पर की गई है कि जिस में किसी को किसी तरह का शक और पकड़ के वास्ते मौक़ा नहीं रहता है और जो अनेक फ़िरक़ों और अनेक मत वालों ने बहुत से काम पुन्य और बहुत से पाप के साथ नाम ज़द किये हैं, इन में बहुत भेद रहता है यानी बाज़े काम ऐसे हैं कि एक मत या एक देश में वे पाप समझे जाते हैं और दूसरे देश और मत में पुन्य माने जाते हैं या एक ही मत में एक वक्त वे पाप करम और दूसरे वक्त में जायज़ शुमार किये जाते हैं, जैसे जानदार का मारना आम तौर पर अज़ाब में दाख़िल है और माँस अहारियों में वही काम जारी है या आदमी का मारना गुनाह है और लड़ाई में वही काम जायज़ समझा गया या अपने पड़ोसी का माल और ज़मीन छीन लेना या

उस से ज़बरदस्ती करना नामुनासिब समझा गया और राजे और बादशाह लोग अपने क़रीब के कमज़ोर राजों का राज ज़रा २ सी बात पर नाराज़ हो कर छीन लेते हैं और यह काम मुल्कगीरी में दाख़िल किया गया या यह कि दूसरे के माल या औरत को हाथ लगाना पाप समझा गया लेकिन बाद फ़तह के राजा लोग शहरों के लूटने का हुक्म दे देते हैं और उस वक़्त उनकी फ़ौज बहुत से बेगुनाह मर्द और औरत को क़त्ल कर डालती है और उन का माल लूट लेती है और औरतों की इज़्ज़त बिगाड़ती है या यह कि अपने मतलब के वास्ते झूठ बोलना नाक़िस समझा गया और राजों की आपस की कार्रवाई में उनके वकील तरह २ की बातें बना कर और तहरीरात को उलट फेर कर उन के म़ानी और मतलब अपने मुफ़ीद लगा कर जो कार्रवाई करते हैं वह दानाई और उम्दा कारगुज़ारी में दाख़िल होती है या दीवानी और फ़ौजदारी के मुआमलात में जो कोई वकील या मुख़्तार, क़ानून और अपनी तक़रीर के ज़ोर से सफ़ेद को सियाह या सियाह को सफ़ेद दिखला देवे वह बहुत होशियार और चालाक कारकुन समझा जाता है ॥

८५–राधास्वामी मत में जो काम कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में सुरत को पहुंचावे, शुभ और पुन्य करम में दाख़िल है और जिस काम के करने से दूरी होती जावे वही अशुभ और पाप

करम हैं। यह शुभ और अशुभ करम मनुष्य की ज़ात से तअल्लुक़ रखते हैं॥

८६--कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल सब की जड़ यानी आदि भंडार हैं, उन्हीं के चरनों से धार प्रघट होकर नीचे तक रचना करती चली आई। जिस धार यानी सुरत का रुख़ मन और इंद्रियों के वसीले से बाहर और नीचे की तरफ़ है और उसी तरफ़ उसकी कार्रवाई जारी है, वह दिन २ किसी क़दर दूर होती जावेगी और जिस सुरत ने कि संतमत का भेद और जुगत लेकर अपना रुख़ चरनों की तरफ़ मोड़ना शुरू किया और राधास्वामी दयाल के सन्मुख पहुंचने और उनके दर्शन का विलास हासिल करने का इरादा सच्चा और पक्का करके अभ्यास शुरू किया, वही सुरत दिन २ नज़दीक होकर एक दिन चरनों में पहुंच जावेगी, ऐसी समझ लेकर सुरत शब्द का अभ्यास करना यह शुभ और पुन्य कर्म है॥

८७–असली शुभ और अशुभ कर्म यही हैं कि जिनका ज़िकर ऊपर लिखा गया। अब वह शरह इन करमों की की जाती है जो इस लोक के ब्योहार के तअल्लुक़ हैं और वह यह है कि जो काम कि यह जीव अपनी निस्बत पसंद न करे उसको औरों की निस्-बत भी पसंद करना नहीं चाहिये यानी जैसा कि यह चाहता है कि लोग इस से बर्ताव करें वैसा ही इसको चाहिये कि औरों के साथ आप बर्ताव करे। इस में

किसी को इसके हाथ से रंज और तकलीफ़ नहीं पहुंचेगी। इस वास्ते इसी का नाम शुभ और पुन्य करम है और इसके बरख़िलाफ़ बर्ताव करना अशुभ और पाप करम है यानी ख़ास अपने आराम और मतलब के लिये मन और बचन और काया से दूसरौं को नुक़सान या रंज या तकलीफ़ पहुंचाना पाप है और वग़ैर अपने ख़ास मतलब के दूसरौं को सुख और फ़ायदा पहुंचाना पुन्य करम है। जो फ़ायदा और आराम न दे सके तो इस मनुष्य को चाहिये कि किसी को दुख भी न देवें॥

८८--जो कोई इन दोनों क़िस्म के शुभ और अशुभ करमौं पर नज़र रख कर समझ के साथ कार्रवाई करेगा उस से कुल्ल मालिक राज़ी होकर उसको प्रेम और भक्ती दान यानी अपनी नज़दीकी और मुहब्बत की बख़्शिश करेगा और जो बरख़िलाफ़ इसके काम करेगा वह दिन २ मालिक के दरबार से दूर होता जावेगा और अंधेरे के घेर में जनम मरन के चक्कर में देहियों के साथ दुख सुख सहता रहेगा॥

८९--राधास्वामी मत में इस बात की बहुत ताक़ीद है कि अभ्यासी ऊपर की लिखी हुई हिदायत के मुवाफ़िक़ कार्रवाई करे तब प्रेम और भक्ती उसकी दिन दिन बढ़ती जावेगी और अभ्यास में भी आनंद और रस मिलता जावेगा और जो इस हुक्म के मानने में समझ बूझकर बेपरवाही करेगा वह अपनी कार्रवाई

के एवज़ में तकलीफ़ पावेगा और मालिक के चरनों के प्रेम से किसी क़दर ख़ाली रहेगा ॥

बयान इस बात का कि कोई सच्चा और कुल्ल मालिक ज़रूर है और जीव सुरत उसकी अंश है ॥

९०—जो कोई निस्बत मौजूदगी कुल्ल और सच्चे मालिक के शक लावे तो उसको यह कहा जाता है कि देखो चेतन्य सब जगह मौजूद है पर बिना मदद अपने से विशेष चेतन्य के कुछ कार्रवाई नहीं कर सक्ता है। जैसे इस लोक में भी चेतन्य मौजूद है पर बग़ैर मदद सूरज की रोशनी और गरमी के यहां कुछ रचना नहीं हो सक्ती और न क़ायम रह सक्ती है ॥

और यह सूरज मय अपने कुटुम्ब परिवार के यानी तारों के दूसरे अपने से ऊंचे सूरज के गिर्द घूम रहा है जो कि इसका मरकज़ है यानी यह हमारा सूरज उस सूरज से ताक़त ले रहा है। इस क़दर तो आसमानी इल्म और दूरबीन की मदद से मालूम हुआ और संत फ़रमाते हैं कि उस बड़े सूरज के मंडल के ऊपर तीन सूरज मंडल एक से एक बहुत बड़े और हैं और इन सब के ऊपर राधास्वामी धाम है, जो कि कुल्ल का मालिक और कुल्ल का निज भंडार है। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि एक के ऊपर एक मालिक

चला गया है और राधास्वामी कुल्ल के मालिक हैं। राधास्वामी धाम अपार और अनंत है उसके परे और कोई मंडल या रचना नहीं है॥

९१–जो लोग कि अपनी नादानी और बेख़बरी से कहते हैं कि कोई मालिक नहीं है और यह रचना आपही आप मसाला यानी माया से हुई है किस क़दर ग़लती में पड़े हैं। उनकी देह की कार्रवाई और इस लोक की कार्रवाई से साफ़ ज़ाहिर है कि कुल्ल रचना का तअल्लुक़ और उसकी कार्रवाई किसी ऊंचे से ऊंचे और बड़े से बड़े स्थान से हो रही है जैसे देह की कार्रवाई उस धार पर मुनहसिर है जो दिमाग़ के ऊंचे मुक़ाम से उतर कर तमाम देह में रगों के मंडलों के वसीले से फैली हुई हैं और इसी तरह इस लोक और कुल्ल ऊंचे नीचे लोकों की रचना की कार्रवाई ऊंचे से ऊंचे और बड़े से बड़े सूरज मंडल के वसीले से जारी है और वह मालिक कुल्ल अंतरजामी और सर्व समरत्थ और महाज्ञानी और सब से भारी बन्दोवस्त करनेवाला और कुल्ल का पैदा करने वाला और कुल्ल रचना को चेतन्यता देने वाला यानी कुल्ल जानों की जान है। जो उस ऊंचे देश से धार हर एक मंडल में होकर न आवे तो सब रचना का खेल बिगड़ जावे और बंद हो जावे॥

९२–इस लोक की कुल्ल रचना और भी देह की रचना से साफ़ ज़ाहिर है कि हर एक देह और उसके

अंग अंग के बनाने में कुदरत और समरतथता और
इरादा
फिर य
मालिक
और उ
लिक क
यह स
हुक्म व
की ता

९३--
है। दे
करती
है यानी
कि शक्त
शक्ती उ
और ती
इसी अ
और स
देह में
में मुखा

देते हैं और जिस वक़्त कि सुरत उस देह को छोड़ती है उसी वक़्त से आपस में बरख़िलाफ़ी के साथ कार्रवाई करके उसका रूप और रंग बिगाड़ देते हैं ॥

९४--ऊपर के बयान से ज़ाहिर है कि सब तत्व

और गुन और शक्तियाँ सुरत के हुक्म बरदार हैं जहाँ यह अपना ज़हूरा करे वहाँ यह सब हाज़िर होकर उसकी ताबेदारी में कार्रवाई करते हैं और जब वह उस देह को छोड़ देवे तब सब जुदा होकर अपने २ मंडल में समा जाते हैं और जो कि यह सुरत ही इस लोक में सत्य है कि इसके आसरे सब रचना सत्त दिखलाई देती है यानी कुल्ल देहियां अपनी २ कार्रवाई कर रही हैं और सब देहियों और रूपों को चेतन्य करने वाली भी यही सुरत है और इसी के वसीले से कुल्ल रस और आनंद और सरूर पैदा होता है। तो अब यही सुरत सत्त चित् आनंद स्वरूप हुई और जोकि यह अमर और अजर है और शब्द इसका ज़हूरा है तो यह उसी सिंध रूप सत्त चित् आनंद कुल्ल मालिक की अंश साबित हुई यानी इसका और उसका जौहर एकही है ॥

९५—जब यह बात साबित हुई कि कोई कुल्ल मालिक सत्त चित् आनंद स्वरूप और सर्व समरत्थ और सर्व ज्ञानी ज़रूर मौजूद है और सुरत जीव उसकी अंश है तो जब तक कि यह अंश अपने अंशी से यानी बूँद अपने सिंध और किरन अपने सूरज में न पहुंचेगी तब तक इसको परम आनंद प्राप्त नहीं होगा और जब तक माया के घेर में रहेगी तब तक उसके मसाले के ग़िलाफ़ इस पर चढ़े रहेंगे यानी इस को देहियों में बैठ कर कार्रवाई करनी पड़ेगी और

उनके साथ दुख और जनम मरन की तकलीफ़ सहनी पड़ेगी ॥

९६–इस वास्ते जो इन तकलीफ़ों से बचना चाहे और परम आनंद को प्राप्त होना चाहे उसको राधास्वामी मत के मुवाफ़िक़ अभ्यास करके आहिस्ता २ इस माया के देश को छोड़ कर अपने निज घर की तरफ़ चलना ज़रूर चाहिये और कुल्ल मालिक के मौजूदगी की निस्बत मन में शक नहीं लाना चाहिये नहीं तो मरने के बाद बहुत पछताना और शरमाना पड़ेगा और उस वक़्त का अफ़सोस कुछ फ़ायदा नहीं देवेगा ॥

नीचे दरजे के मालिकों और औतारों और देवताओं की पूजा का बयान और उसका नतीजा ।

९७–जो लोग कि औरों को यानी देवताओं और औतारों को मालिक समझ कर मान रहे हैं उनका पूरा और सच्चा उद्धार नहीं हो सक्ता है और जो परमेश्वर ब्रह्म या खुदा को कुल्ल मालिक समझते हैं वे भी सच्चे कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल से बेख़बर हैं और इस वास्ते वे भी माया के घेर से बाहर नहीं जा सक्के और इस सबब से जनम मरन के चक्कर से नहीं बच सक्के क्योंकि ब्रह्म और ईश्वर और परमेश्वर या परमात्मा सब सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल की एक २ कला हैं और माया के संग मिले हुए हैं यानी

उससे मिल कर रचना की कार्रवाई कर रहे हैं। उनके लोक में जो कोई उनकी भक्ती करके पहुंचेगा वह बहुत काल के लिये सुखी हो जावेगा पर जनम मरन से बचाव नहीं होगा ॥

९८–और जितने औतार हुए हैं वे सब ब्रह्म या विष्णु के हुए हैं और ब्रह्मा विष्णु और महादेव यानी तीनों गुन बड़े देवता हैं और बाक़ी देवता इनसे उत्पन्न हुए इस वास्ते जो कोई इनकी भक्ति करेगा वह इनके लोक में पहुंच सक्ता है मगर इनका लोक अमर नहीं है और न वहां की रचना अमर है। इस सबब से जनम मरन से छुटकारा नहीं हो सक्ता है और बनिस्बत ब्रह्म और पारब्रह्म और शक्ती के देश या लोक के देवताओं और औतारों के लोकों में उमर भी थोड़ी है यानी वहाँ जनम मरन जल्द होता है और सुख भी ऊपर के लोकों की निस्बत कम है ॥

९९–इस वास्ते मुनासिब है कि जब कोई परमार्थी काम करना चाहे तब अच्छी तरह से निरनय करके अपने सच्चे मालिक की पहिचान करे और दूसरों का पक्ष छोड़ कर सच्चे मालिक की सेवा और भक्ती इख़्तियार करे तब पूरा फ़ायदा होगा। क्योंकि भक्ती भाव सब जगह बराबर और एकसां बरतना पड़ेगा पर फल यानी फ़ायदा में हर एक के फ़र्क़ होगा ॥

१००–और जो कोई असली रूप और धाम औतारों और देवताओं से बेख़बर हैं और सिर्फ़ उनकी

नक़ल यानी मूरत की पूजा और भक्ती करते हैं और असल का खोज नहीं करते वे असल को नहीं पा सक्ते। इस वास्ते उनको उस क़दर सुख भी नहीं मिल सक्ता जिस क़दर कि असल के पूजने वालों को मिलता है। इनकी सीढ़ी बहुत नीची है॥

बर्णन हाल बाचक ज्ञानी और सूफ़ी का और यह कि उनका पूरा उद्धार नहीं होता॥

१०१—और जो लोग कि इस वक्त में ज्ञानी और बिद्वान और बेदान्ती या सूफ़ी कहलाते हैं वे भी कुल मालिक सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल से बेख़बर हैं। इन को पुराने जोगेश्वर बेदान्ती और ज्ञानी की बानी और बचन से ब्रह्म पद तक का हाल मालूम हुआ पर वह भी तफ़सीलवार नहीं सिर्फ़ इस क़दर कि ब्रह्म सब जगह ब्यापक है और वही सत्त चित् आनंद स्वरूप है और माया से न्यारा है और कुल रचना ब्रह्म या आत्मा स्वरूप है। फिर कहीं जाना आना नहीं है। इस क़दर समझ लेकर इस बात का निश्चय-कर लेना कि मैं ब्रह्म हूं और सब ब्रह्म हैं वास्ते उद्धार के वक्त मौत यानी जुदाई शरीर के काफ़ी समझते हैं और मन को किसी तरकीब से कुछ दिन अभ्यास करके एकाग्र करना और उसके पीछे ऐसा बिचार करते रहना कि मैं कोई शै रचना में से नहीं

हूं तत्त्व नहीं हूं, गुन नहीं हूं वग़ैरह २ फिर जो कुछ कि बाद निषेद सब पदार्थों के बाक़ी रहा वही ब्रह्म है और वह ब्रह्म मैं ही हूं, यही उनका अभ्यास है और कोई तरकीब सुरत के चलने और चढ़ने की वे नहीं मानते और कहते हैं कि जब ब्रह्म सब जगह मौजूद है फिर चलना और चढ़ना क्या ज़रूर है और सुरत जीव को वे ब्रह्म से जुदा या उसकी अंश नहीं मानते सिर्फ़ ब्रह्म ही मानते हैं ॥

१०२—और जोगेश्वर ज्ञानी और वेदान्ती जो पुराने वक़्तों में गुज़रे उन्होंने अष्टाङ्ग योग यानी प्राणायाम का अभ्यास करके आत्मा को पिंड यानी छः चक्र की हद्द से न्यारा किया और ब्रह्मांड में चढ़ कर ब्रह्म पद में पहुंच कर फ़र्माया कि ब्रह्म सर्वत्र व्यापक है। उनका यह कहना उस स्थान पर पहुंच कर सही था क्योंकि वहाँ पिंडी और ब्रह्मांडी माया बहुत नीचे रह गई और वह शुद्ध ब्रह्म का स्थान था कि जहाँ से सेवाय ब्रह्म के और कोई वस्तु यानी माया वग़ैरह और उसकी रचना नज़र नहीं आती। जैसे ऊँचे पहाड़ पर चढ़ कर नीचे देश की रचना नज़र नहीं आती सिर्फ़ गुबार या बादल छाया हुआ दिखलाई देता है या जो कोई समुद्र या बड़े दरिया में गहरा गोता मारे उसको उस वक़्त सिवाय पानी के दूसरी चीज़ नज़र नहीं आती ऐसे ही जोगेश्वर ज्ञानियों को शुद्ध ब्रह्म पद में पहुंचने पर सिर्फ़ ब्रह्म व्यापक

नज़र आया और माया और उसकी रचना जो नीचे थी वहाँ से नज़र नहीं आई और असल में वहाँ पहुंचने वाले की यह हालत सच्ची होती है ॥

१०३—लेकिन हाल के ज्ञानी और वेदान्ती और सूफ़ियों की अजब हालत है कि इन्हों ने कोई अभ्यास प्राण और आतमा के चढ़ाने का अपने घट में नहीं किया और न करने की ताक़त और ख़्वाहिश रखते हैं सिर्फ़ जोगेश्वरों के सिद्धान्त के वचनों को पढ़ कर या सुन कर उनका निश्चय करके अपने को ब्रह्म और ज्ञानी और विद्वान मान कर चुप हो बैठे और जो वचन कि उन्हीं जोगेश्वर ज्ञानियों ने निस्बत जोग अभ्यास और उसके संजमों की कार्रवाई के लिखे हैं, उनको छोड़ दिया यानी मिहनत और अभ्यास वास्ते सफ़ाई और मर्दन करने यानी क़ाबू में लाने मन और इंद्रियों के न कर सके और उनके सिद्धान्त के वचनों से ऐसा समझ कर कि जब ब्रह्म सब जगह मौजूद है तो उस से मिलने के लिये अभ्यास करने की क्या ज़रूरत है और उन वचनों की तामील कि जिस में अभ्यास के वास्ते ताकीद है नहीं करते ॥

१०४—और जोगेश्वर ज्ञानियों ने साफ़ अपने ग्रंथों में फ़र्माया है कि जब तक मन और बासना का नाश न होगा तब तक तत्त्व पद का ज्ञान हासिल नहीं हो सक्ता है और यह कि जब तक किसी में यह

चार साधन पूरे २ न पाए जावें वह ज्ञान के ग्रंथों के पढ़ने का अधिकारी नहीं है और जो कोई बग़ैर चार साधन हासिल किये उन ग्रंथों को पढ़ेगा तो वह पढ़ना उसके हक़ में ज़हर क़ातिल होगा यानी आतम घाती हो जावेगा और वह चार साधन यह हैं, अव्वल (१) वैराग (२) विवेक (३) षट सम्पति (१—सम यानी अंत:कर्ण का रोकना, २—दम यानी बाहर इंद्रियों का रोकना; ३—उपरति यानी संसार के दुख सुख और ख़्वाहिशों से उपराम यानी न्यारे रहना, ४—तितिक्षा यानी तकलीफ़ की बरदाश्त करना ५—सरधा यानी परमार्थ की सच्ची क़दर चाह और गुरू और महात्माओं और उनके बचनों में भाव और प्यार, ६—समाधानता यानी होशियारी और पूरी समझ के साथ गुरू और महात्माओं के बचन को सुनना और चित्त में धरके उनके मुवाफ़िक़ बर्ताव करना) और (४) मुमुक्षता यानी सच्ची और तेज़ चाह वास्ते हासिल करने मुक्ती यानी अपने जीव के कल्यान के ॥

१०५—अब मालूम होवे कि इन चारों साधन का हासिल होना और मन और वासना का नाश होना बग़ैर योग अभ्यास की मदद से किसी क़दर पिंड से न्यारे होने के यानी बग़ैर छ: चक्र के बेधने के किसी सूरत में मुमकिन नहीं है। इसी सबब से आज कल के ज्ञानी वाचक और विद्यावान् कहलाते हैं यानी बातें तो पूरे जोगेश्वरों की सी बनाते हैं और उनके मन

और इंद्रियों की हालत और उनका व्योहार और बर्ताव संसारियों और अज्ञानी लेगों की मुवाफ़िक़ है। जो ब्रह्म आनंद उनको प्राप्त हुआ होता तो उस आनंद में मगन और बेपरवाह रहते और मेलें और तमाशों में और देशों और मकानें की सैर के वास्ते देश विदेश मारे २ न फिरते और रेल के ख़र्च और भंडारें के लिये इस से उस से मांग कर रुपये न जोड़ते। बल्कि जो सच्ची चाह परमार्थ की और अपने जीव के कल्यान का दर्द उनके दिल में होता तो किसी पूरे गुरू या महात्मा को तलाश करके उसके सन्मुख दीनता और आधीनता के साथ रह कर कोई दिन सुरत और मन की घट में चढ़ाई का अभ्यास करते कि जिस से चारों साधन पूरे २ उन में आ जाते और मन और बासना का किसी क़दर नाश हो जाता और तब ज्ञान के बचन सुनने और समझने के अधिकारी बन जाते॥

१०६–लेकिन अफ़सोस की बात है कि इन बाचक ज्ञानियों को अपने मन और इन्द्रियों के हाल की भी ख़बर नहीं कि कैसे चक्रों में उनको डाल कर घुमा रहे हैं और जो कोई उनको चितावनी का बचन सुनावे तो उससे लड़ने को तैयार होते हैं और जो संतो का भेद और जुगत मन और सुरत के चढ़ाने की सुनाना चाहे तो उससे बाद बिबाद करते हैं और अपने जीव के हित के बचनें का निरादर करके

मुतलक़ नहीं सुनते यह लोग आप भी ठगाये गये और जो कोई उनके वचन सुनेगा और मानेगा वह भी धोखा खावेगा और अपने जीव के कल्यान में आप ख़लल डालेगा यानी आतम घाती हो जावेगा ॥

१०७—ग़ौर करने से मालूम हो सक्ता है कि चेतन्य में वसवव हायल (परदा डालने) होने माया के वहुत दरजे हो गये हैं । यानी ऊँचे से ऊँचे दरजे का चेतन्य महा निर्मल और लतीफ़ है और जहाँ से कि माया का ज़हूर हुआ है उससे नीचे की तरफ़ दरजे वदरजे माया की कसाफ़त से चेतन्य भी मलीन हो रहा है और इस लोक का चेतन्य निहायत कसीफ़ यानी मलीन है कि अपनी ताक़त से कोई कार्रवाई रचना की नहीं कर सक्ता है, और सूरज मंडल के विशेष चेतन्य का आधीन है । इसी तरह सूरज मंडल का चेतन्य अपने से ऊंचे के सूरज मंडल के चेतन्य का आधीन है यानी माया की हद में समान और विशेष चेतन्य का हिसाव नीचे से ऊपर तक चला गया है और माया के घेर के पार महा निर्मल चेतन्य देश है । वग़ैर वहाँ पहुंचे किसी का सच्चा और पूरा उद्धार नहीं हो सक्ता है । फिर वाचक ज्ञानियों ने जो चेतन्य को व्यापक मान कर ऊपर की तरफ़ चलना चढ़ना नहीं माना तो किस क़दर ग़लती करी और अपने जीव के उद्धार में किस क़दर धोखा खाया ॥

क्योंकि इस देश का चेतन्य मलीन माया के संग से आप मलीन हो रहा है और जनम मरन यानी

रचना के भाव और अभाव में पड़ा हुआ है। फिर यहाँ रह कर यानी पिंड में बैठकर जहां से कि दुनिया की कार्रवाई मन और इन्द्रियों के वसीले से हो रही है किसी का छुटकारा जनम मरन और देह और दुनिया के दुख सुख से नहीं हो सकता है और यही सबब है कि वाचक ज्ञानियों की वह हालत नहीं बदलती यानी उनके मन और इन्द्रियों का वर्ताव मुवाफ़िक़ संसारी और अज्ञानी जीवों के रहता है॥

१०८–जोगेश्वर ज्ञानियों ने ब्रह्म में तीन दरजे क़ायम किये यानी माया सबल ब्रह्म जो कि माया से मिलकर रचना कर रहा है और साक्षीब्रह्म जो कि उसको मदद दे रहा है और शुद्धब्रह्म जहाँ कि माया निहायत सूक्ष्म और बीज रूप है और वह पद रचना की कार्रवाई से किसी क़दर न्यारा है यानी गुप्त मदद दे रहा है अब जो मुवाफ़िक़ समझ वाचक ज्ञानियों के ब्रह्म के सर्वत्र व्यापक होने में कोई भेद नहीं था तो जोगेश्वर ज्ञानियों ने यह दरजे क्यों मुक़र्रर किये और माया सबलब्रह्म और साक्षीब्रह्म के मंडल में क्यों नहीं ठहरे और योग अभ्यास करके पहिले पिंड से न्यारे होकर और फिर ब्रह्मांड में चढ़कर शुद्ध ब्रह्मपद में पहुंच कर क्यों बिसराम किया॥

१०९–इससे साफ़ ज़ाहिर है कि वाचक ज्ञानी निरे विद्यावान् हैं यानी परमार्थी किताबें सिर्फ़ मुतअल्लिक़ ज्ञान के पढ़कर अपने आप को पूरा समझते हैं और

ब्रह्म रूप मानते हैं और अमल यानी अभ्यास कुछ नहीं किया करते हैं। विद्या यानी इल्म बग़ैर अमल यानी अभ्यास के ख़ाली है। इस वास्ते यह लोग उस अमल यानी अभ्यास से ख़ाली रहकर अहंकारी और मानी हो गये और अपने पैरों में आप कुल्हाड़ी मारी यानी घट में चलने और चढ़ने को फ़ुज़ूल समझ कर संसारी और अज्ञानी जीवों के गरोह में शुमार किये गये बल्कि उनसे भी कम क्योंकि उन लोगों के चित्त में थोड़ी बहुत दीनता है और जो कोई महात्मा उनको मिल जावें तो उनके बचन को मान कर उनकी दया के भागी हो जावें और अपना थोड़ा बहुत उद्धार का रास्ता जारी कर लेवें और यह बाचक ज्ञानी इस क़दर अहंकारी और बेपरवाह हो गये कि अपने बराबर किसी को ख्याल नहीं करते और किसी के बचन को जो इनके हित के वास्ते कहे नहीं मानते हैं॥

११०–और मालूम होवे कि बाचक ज्ञानी क़रीब २ नास्तिक हैं यानी जब उन्होंने अपने आप को ब्रह्म माना तो उनको किसी की सेवा या भक्ती करने की ज़रूरत नहीं रही तो वह असली ब्रह्म जोकि तमाम तीन लोक की रचना का करना धरता है गायब कर दिया गया और उसकी भक्ती मौक़ूफ़ हो गई। अब ख्याल करो कि ऐसे ज्ञान का मत नास्तिक मत हुआ या क्या, क्योंकि यह बाचक ज्ञानी जीवों से अपनी भक्ती और सेवा तो कराते हैं और आप किसी की

भक्ती या सेवा नहीं करते बल्कि भक्ती से विरोध रखते हैं और कहते हैं कि जो कोई भक्ती करेगा उस का जनम मरन दूर न होगा और अपना जनम मरन नहीं मानते हैं यानी ऐसा ख्याल करते हैं कि वे देह छोड़ने पर ज़रूर मुक्त हो जावेंगे और हाल यह है कि अपनी ज़िन्दगी भर में मुक्ती की कुछ भी हालत या कैफ़ियत नहीं पैदा करी तब मरने पर किस तरह मुक्ती मिल सक्ती है ॥

१११–जो लोग कि मदर्सों में विद्या पढ़ कर दरजा हासिल करते हैं उनमें से बाज़े इल्म फ़िलासफ़ी और हिकमत की किताबें पढ़ कर और कुल मालिक की मौजूदगी में शक लाकर नास्तिक मत की तरफ़ रुजू करते हैं उनका हाल भी थोड़ा बहुत वाचक ज्ञानियों के मुवाफ़िक़ समझना चाहिये यानी बाज़े उन में से चेतन्य को सब जगह व्यापक मान कर उसकी और माया की मिलौनी से रचना का ज़हूर कहते हैं पर उस चेतन्य को समझवार और शक्तिमान नहीं मानते ॥

और कोई २ चेतन्य को न्यारा नहीं मानते, उसको माया के मसाले का खुलासा ख्याल करते हैं और कहते हैं कि जब जीव की मौत होती है उस वक्त माया का मसाला यानी तत्त्व और गुन वग़ैरह सब आपस में जुदा हो कर अपने २ मंडल में जा समाते हैं और वह चेतन्य कूवत जो इनकी मजमूई (मिलौनी) शकल से पैदा हुई थी गुप्त यानी ग़ायब हो जाती है

और फिर मनुष्य के आपे का कुछ निशान बाक़ी नहीं रहता है। इस वास्ते जो कुछ काम किया जाता है वह इसी ज़िन्दगी के आराम के वास्ते है और दूसरों को भी आराम देना चाहिये इस से ज़्यादा वे लोग कुछ नहीं मानते और मालिक को भक्ती करने वालों को नादान समझते हैं॥

११२–यह सब मत काल पुर्ष ने वास्ते भरमाने और सत्त पद से बेख़बर रखने जीवों के विद्या और बुद्धी की मदद से प्रघट कराये और जो जीव कि उस क़िस्म की तबीयत रखते हैं वे उन में शामिल होकर सच्चे मालिक से मुनकिर (नास्तिक) हो जाते हैं और कुल मज़हबों पर जो किसी को मालिक मानते हैं तान करते हैं और कहते हैं कि उनके आचार्यों ने अपनी नामवरी और फ़ायदे की नज़र से उन्त मतों को मूरख जीवों में जारी किया और उनको ख़ौफ़ और उम्मेद दिखाकर अपने बचनों में ख़ूब मज़बूत बांधा असल में कोई मालिक नहीं है और बाद मौत के करम और उसका फल बाक़ी नहीं रहता है और न कहीं स्वर्ग और नर्क वग़ैरह है॥

११३–इन लोगों ने सिर्फ़ माया के पदार्थों के भोग बिलास को अपना आनंद और सरूर समझा है और जीवों की अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ मदद करना उपकार समझा है। इनकी समझ पर अफ़सोस आता है कि कुल कार्रवाई इस रचना की अपनी आँख से

देखते हैं कि वह किसी न किसी रूह की ताक़त से जारी है और वह रूह किसी न किसी क़िस्म की देह यानी जिस्म में बैठकर कार्रवाई करती है और मिस्ल सूरज और चाँद वग़ैरह बेशुमार अरसे से उनका ज़हूर और क़याम चला आता है और बेशुमार अरसे तक जारी रहेगा। इसी तरह इस मंडल के ऊपर और मंडल मालूम होते हैं और क़ानून क़ुदरत का निज़ाम फ़लकी और ज़मीनी यानी ऊँचे और नीचे देश की रचना के बन्दोबस्त में देख कर साबित होता है कि उनका बन्दोबस्त मुक़र्रर किये हुए क़ायदों के मुवाफ़िक़ जारी है और बेशुमार अरसे से ऐसाही चला आया है और जारी रहेगा और इस दुनिया के बन्दोबस्त में भी कोई न कोई अफ़सर और कार-कुन की मार्फ़त कार्रवाई जारी होती है। इसी तरह घर का बन्दोबस्त भी किसी घर के बड़े की मार्फ़त जारी होता है और जोकि इस दुनिया की कार्रवाई ऊपर की रचना की छाया यानी अक्स और नक़ल समझी जाती है इस सबब से मुमकिन नहीं है कि ऊंचे देश की रचना का बन्दोबस्त और इसी तरह कुल रचना का बन्दोबस्त बग़ैर किसी अफ़सर या मालिक के जारी होवे। अलबत्ता एक के ऊपर एक अफ़सर या मालिक मुक़र्रर है और सब के परे और सब के ऊपर कुल मालिक का देश और तख़्त है। वहाँ से आदि में कार्रवाई रचना की शुरू हुई और सब बन्दोबस्त और क़ायदे वहीं से मुक़र्रर होते चले

आये और जोकि कुल रचना के हर एक जिस्म और चीज़ के बनाने में इरादा और मतलब और कुदरत और कारीगरी पाई जाती है (जो समरत्थ करता की मौजूदगी के गवाह हैं) फिर जो कोई रचना को आप से आप बग़ैर किसी करता के मानते हैं वह सरीह ग़लती में पड़े हुए हैं। पर अपने मन हठ से इस बात के क़ायल नहीं होना चाहते सो इसका फल उनको वक्त़ सख़्त तकलीफ़ के इस ज़िन्दगी में या वक्त़ छोड़ने इस देह के मालूम पड़ेगा॥

११४—बहुत से मुआमले तसदीक़ किये हुए ऐसे हैं कि जहां एक शख़्स ने पैदा होकर अपने पिछले जन्म का हाल बयान किया और जो उसके कलाम की तसदीक़ उसके पिछले जनम की सकूनत (रहने) की जगह से की गई तो सब बातें दुरुस्त निकलीं। फिर जो यह लोग रूह सुरत का मरते वक्त़ अभाव मानते हैं निहायत ग़लती करते हैं। ज्यादा इस मुआमले को यहां तूल करना मुनासिब नहीं। जिस क़दर लिखा गया है उसी क़दर समझवार सतसंगी खोजी के वास्ते काफ़ी है और जो लोग बाद बिबाद करें वह किसी दलील से क़ायल नहीं होवेंगे उनसे बात चीत करना फ़ुजूल है॥

समाजों की परमार्थी कार्रवाई

११५–जो समाज जहां तहां आज कल जारी हैं उन के आचार्य विद्यावान और बुद्धिमान हुए । उन्होंने हालत इस वक्त के जीवों की देखकर कि खान पान और आज़ादगी की ख़्वाहिश से अपने मत को छोड़ कर ग़ैर मत में शामिल होते चले जाते हैं या इरादा शामिल होने का रखते हैं इस सबब से मुनासिब और मसलहत वक्त समझ कर क़रीब २ बेदान्त शास्त्र के क़ायदे और असूल के मुवाफ़िक़ नया मत खड़ा किया कि उस में हर तरह की आज़ादगी खान पान वग़ैरह और शादी ब्यौहार की मिसल ईसाई मत वालों के जीवों को देदी और जो ज़ाहिरी रसूम कि पुराने वक्तों से जारी हैं और उनको लोग अपने मज़हब का एक अंग समझते हैं और उनके जारी रहने में इस ज़माने में सिवाय हर्ज और तकलीफ़ के कोई ख़ास दुनियावी या परमार्थी फ़ायदा नज़र नहीं आता उनकी क़ैद छुड़ा दी–और एक मालिक का जिसको मुताबिक़ वेदान्त शास्त्र के ब्रह्म कहते हैं इष्ट बंधवा कर उसकी स्तुति और महिमा और शुकराने के भजन या बानी का पढ़ना या गाना जारी किया और नक़ल यानी मूरत वग़ैरह बना कर पूजा करने को मना और निषेद किया और तीरथ बरत और औतार और देवताओं की पूजा (मूरतें बनाकर) जो कसरत से जारी थी मौक़ूफ़ करदी और जो कोई ज्यादा शौक़ वाले

मालूम हुए उनको वास्ते प्राणायाम यानी अष्टाङ्ग योग के अभ्यास करने की हिदायत की। लेकिन जो कि यह अभ्यास निहायत कठिन और उसके संजम भी बहुत कठिन हैं इसका सच्चा अभ्यासी उनके बेड़े में ज़ाहिरा कोई नज़र नहीं आता और कोई २ ब्रह्म को आकाशवत व्यापक मान कर उसका ध्यान आंख बंद करके या खुली आँखो से बग़ैर मुक़र्रर करने किसी ख़ास मुक़ाम के अंतर या बाहर में करते हैं। इस अभ्यास से थोड़ी सफ़ाई होती है और जो कोई प्रेम सहित बानी का पाठ करते हैं या भजन गाते हैं तो वह भी उस वक़्त किसी क़दर अपने मन में गदगद होकर प्रेम की हालत में थोड़ी देर के वास्ते भर जाते हैं मगर वह हालत ज़्यादा ठहराऊ नहीं होती और न उसकी तरक़्क़ी सिर्फ़ इसी क़दर कार्रवाई से मुमकिन है।

इन समाजों में सिर्फ़ इसी क़दर साधन वास्ते प्राप्ती मुक्ती के जारी है॥

११६—यह सब कुल और सच्चे मालिक के भेद और अन्तर में मन और सुरत के चढ़ाने के अभ्यास से बिल्कुल बेख़बर हैं और इस सबब से उन जीवों का जो इन समाजों में शामिल हैं सच्चा उद्धार बल्कि किसी ऊँचे दरजे का भी उद्धार या मुक्ती मुमकिन नहीं। बहुत से लोग तो इन समाजों में सिर्फ़ नाम-वरी और दुनिया की कार्रवाई या आज़ादी के हासिल करने के लिये शामिल होते हैं और असल में पर-

मार्थ की चाह उनके दिल में बिल्कुल नहीं मालूम होती है ॥

११७—एक नुक़्स (कसर) इन समाजों में और भी है कि वे गुरू की ज़रूरत नहीं समझते और न पूरे गुरू का खोज करते हैं। सबब इसका यह है कि इनके मत में भेद और अभ्यास नहीं हैं और इसी सबब से इनको ज़रूरत पूरे गुरू की मदद की नहीं होती क्योंकि इनके मत में सिर्फ़ किताबों का पढ़ना और पढ़ाना या भजन वग़ैरह का गाना जारी है और इनकी किताबों में भेद रास्ते या तरकीब अभ्यास अंदरूनी (अंतरी) का कोई ज़िकर नहीं है कि जिसके वास्ते ज़रूरत दरियाफ़्त की भेदी और अभ्यासी से होवे। बल्कि उन में तारीख़ी हाल या महिमा और सिफ़त मालिक की, या मसले इल्मी और अक़्ली या हाल तत्त्वों और गुनों का जो स्थूल रचना की कार्रवाई कर रहे हैं दर्ज है। इस सबब से जिस किसी ने थोड़ी बहुत रसमी विद्या हासिल की है वह भी उन किताबों को पढ़ कर उनका मतलब अपनी समझ के मुवाफ़िक़ समझ सक्ता है। यह लोग भेदी और अभ्यासी गुरू की क़दर नहीं जानते हैं, क्योंकि इनको अपने जीव के सच्चे उद्धार और अपने मालिक से मिलने की ख़्वाहिश बिल्कुल नहीं है ॥

११८—इसी तरह कर्मकांड के शास्त्र भी सिर्फ़ बाहरी रसमों और उनकी कार्रवाई का ज़िकर करते हैं, और इसी सबब से वहाँ भी पूरे गुरू की ज़रूरत

नहीं है सिर्फ़ विद्यावान् गुरू जो होम और जग्य वग़ैरह, और जनम मरन और दूसरे समय के करम किताबों को पढ़कर कराते हैं और जिन को वे आचारज कहते हैं, काफ़ी समझा जाता है और जो लोग आप थोड़ा बहुत संस्कृत ज़बान से वाक़िफ़ियत रखते हैं, वे आप सब कार्रवाई किताबों को देखकर कर सक्ते हैं। यह लोग भी यानी कर्मकांडी पूरे गुरू की क़दर नहीं जानते, और न इनके मन में खोज सच्चे परमार्थ का है, सिर्फ़ कर्म करने से मुक्ती हासिल होने का यक़ीन करते हैं। मगर यह बात सही नहीं है क्योंकि जब तक उपाशना करके, सच्चा ज्ञान हासिल न होगा मुक्ति प्राप्त नहीं हो सक्ती॥

और संतो के बचन के मुवाफ़िक़ यह मुक्ती भी नातमाम है, यानी पूरा और सच्चा उद्धार सच्चे ज्ञानियों का भी जिनको जोग अभ्यास करके ज्ञान प्राप्त हुआ है नहीं होता है। जब तक कि संत मत के मुवाफ़िक़ अभ्यास करके पारब्रह्म पद के पार संत देश में न जावें। फिर कर्मकांडी और बाहरमुख उपाशना मूरत वग़ैरह की करने वालों को सच्ची मुक्ती किस तरह हासिल हो सक्ती है॥

११९–ऊपर के लिखे हुए से ज़ाहिर है कि बाचक ज्ञानी और समाज वाले और कर्मकांडी घट के भेद से बिल्कुल बेख़बर हैं। और हरचंद उनके मत में शब्द की महिमा बहुत की है और साफ़ लिखा है कि आदि में ओम् शब्द प्रगट हुआ, और इसी शब्द

से कुल रचना पैदा हुई और तीन लोक की रचना पैदा हुई और तीन लोक को रचना की ताक़त और मसाले का भंडार भी यही शब्द है। पर यह लोग शब्द का खोज नहीं करते और न रचना का भेद दरियाफ़्त करते हैं, कि कैसे ओम् शब्द से तीन लोक की रचना हुई। जो यह ख़्वाहिश इनके दिल में होती तो ज़रूर भेदी और अभ्यासी गुरू की ज़रूरत इनको पड़ती॥

१२०–ज़रा ग़ौर करने से मालूम होगा और बेद के उपनिषदों में भी लिखा है कि जब तक अभ्यासी ओम् शब्द यानी शब्द ब्रह्म को पहिले प्राप्त हो कर उसके पार न जावेगा, तब तक बेद मत के मुवाफ़िक़ उद्धार न होगा, यानी अशब्द ब्रह्म की प्राप्ती नहीं होगी क्योंकि ओम् शब्द को ही महत्तत्त्व कहते हैं, और वही तीन लोक की रचना के मसाले का भंडार है। फ़िर जब तक उसके पार न जावेगा तीन लोक की रचना के घेर से न्यारा नहीं होगा। यह भेद जोगेश्वर ज्ञानी जानते थे और वे जोग अभ्यास करके ओम् पद के पार पहुंचे पर आज कल के ज्ञानी इस रास्ते और भेद से बिल्कुल बेख़बर हैं और उनको ख़्वाहिश उसके मालूम करने और योग अभ्यास करने की नहीं है। सिर्फ़ अपनी विद्या और बुद्धी की समझ के मुवाफ़िक़ अपनी बिदेह मुक्ती का यक़ीन करते हैं, यानी बाद मरने के मुक्ती का हासिल होना मानते हैं, और यह भारी ग़लती और भूल है, और सच्चे जोगेश्वर

ज्ञानों और उपनिषदों के कलाम के बरख़िलाफ़ है ॥

१२१-रसमी विद्या तो विद्यावान गुरू से हासिल हो सक्ती है, सो विद्यावान गुरू को यह सब मानते हैं पर ब्रह्म ज्ञान बग़ैर ब्रह्मनेष्ठी गुरू के हासिल नहीं हो सक्ता है। सच्चे ज्ञानियों ने तीन दरजे ब्रह्म ज्ञानियों के मुक़र्रर किये हैं, ब्रह्मस्रोत्रिय, ब्रह्मनेष्ठी, ब्रह्म संतुष्ट। ब्रह्मस्रोत्रिय विद्यावान ज्ञानी को कहते हैं, यह अव्वल सीढ़ी है। ऐसे ब्रह्मज्ञानी से जीव का कारज नहीं हो सक्ता, जब तक कि वह पढ़े और सुने के मुवाफ़िक़ नेष्ठा यानी अभ्यास न करे। ब्रह्मनेष्ठी अभ्यासी को कहते हैं कि वह अभ्यास करके ब्रह्मपद में पहुंचना चाहता है और ब्रह्म संतुष्ट उसको कहते हैं कि जो ब्रह्मपद को प्राप्त होकर शान्त स्वरूप हो गया ॥

१२२-अब ख़्याल करो कि जितने ज्ञानी आज कल नज़र आते हैं, वे सब विद्यावान हैं यानी विद्या पढ़कर उन्होंने ब्रह्म का निश्चय किया है। यह निश्चय इल्मी और अक़ली है जीव का कल्यान इससे नहीं हो सक्ता है। जब तक कि उस विद्या के मुवाफ़िक़ अमल यानी अभ्यास न किया जावेगा, और वह अभ्यास अंतरमुख उपाशना ब्रह्मपद की है, यानी प्रेम और भक्ती के साथ जो अभ्यास कि संतों ने इस वक़्त में जारी फ़र्माया है, उसकी कमाई करके पिंड देश से न्यारे होकर, ब्रह्मांड में चढ़कर पहुंचना। क्योंकि प्राणायाम का अभ्यास, जो पिछले वक़्त में जारी था,

जीवों से बिल्कुल नहीं बन सक्ता है, उसके संजम वग़ैरह निहायत कठिन हैं ॥

इन मतों के अभ्यास की कमाई बग़ैर मदद अभ्यासी यानी नेष्ठावान् या संतुष्ट गुरू के किसी तरह मुमकिन नहीं है। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि यह बाचक ज्ञानी सिर्फ़ विद्या में अटके रह गये और अंतरमुख अभ्यास इन से नहीं बना। इस वास्ते इन्होंने अभ्यासी गुरू का खोज नहीं किया और जो कोई ऐसा गुरू मिले तो उसके बचन को भी नहीं मानते और नहीं सुनते हैं। यह लोग साफ़ खिलाफ़ बचन सच्चे जोगेश्वर वेदान्ती या ज्ञानी और वेद मत के कारवाई कर रहे हैं और फ़िर अपनी ग़लती और भूल के मन-हठ और अहंकार से क़ायल नहीं होते ॥

१२३–यही हाल कुल मतों के लोगों का है कि अपने अचारजों के बचन के बरख़िलाफ़ कार्रवाई कर रहे हैं यानी नीचे के दरजे की बातों में अटक रहे हैं या अपने मन और बुद्धि के वसीले से बाहरमुख पूजा ईजाद (नई जारी) करके जीवों को उस में भरमा रहे हैं और अपने रोज़गार के ख़ातिर सच्ची बात को छिपाते चले आये हैं यहां तक कि अब वे उन सच्ची बातों से आप भी बेख़बर रह गये और जो कोई उन बातों को जनावें उस से बिरोध करते हैं और बावजूदेकि आप अपने आचारजों के बचन से ग़ाफ़िल और बेख़बर हैं उलटा उस समझाने वाले को निन्दक

क़रार देकर आम जीवों को उलटे वचन सुना कर सच्चे रास्ते पर चलने से बाज़ रखते हैं यानी इन्होंने अपना अकाज किया और औरों का भी अकाज करते हैं ॥

१२४—सच्चे परमार्थी को ऐसे लोगों और बाहर मुखी पूजावालों के संग से क़तई परहेज़ करना चाहिये और उनके वचनों को सुनना नहीं चाहिये बल्कि नेष्ठावान या अभ्यासी गुरू से (और जो मिल जावे तो संतुष्ट गुरू से) मिलकर उनसे अभ्यास की जुगत दरियाफ़्त करे और जिस क़दर बन सके अभ्यास कर के अपने अंतर में आनंद हासिल करना और जीते जी अपनी मुक्ति होती हुई देखना चाहिये ॥

संत सतगुरु और साध गुरू की पहिचान

१२५—राधास्वामी मत में संत सतगुरु या साधगुरू की ख़ास पहिचान यह रक्खी है :—

(१) यह कि सुरत शब्द मारग के भेदी और अभ्यासी होवें और घट का भेद और जुगत अभ्यास की मय नाम स्थानों और शब्दों के समझाते होवें और सिवाय इसके दूसरे क़िस्म के अभ्यास की हिदायत न करते होवें ॥

(२) यह कि दर्दी खोजी को फ़ौरन वचन सुन कर और अभ्यासियों की हालत देख कर दिल में शान्ती और आनंद पैदा होगा और जिस क़दर उस

के संशय और संदेह दूर होते जावेंगे और प्रश्नों के पूरे जवाब मिलते जावेंगे उसी क़दर उसकी प्रीत और प्रतीत संत सतगुरु या साधगुरू के चरनों में बढ़ती जावेगी और अंतर में राधास्वामी दयाल की दया के परचे पाकर यक़ीन मज़बूत होता जावेगा और प्रेम दिन २ बढ़ता जावेगा इससे बढ़कर यानी बचन और भेद से ज़ियादा कोई पहिचान नहीं है कि जिससे सच्चे परमार्थी के दिल में थोड़ा बहुत यक़ीन पैदा होवे कि यहाँ से मेरा परमार्थी काम बनेगा ॥

(३) यह है कि जो कोई कुछ अरसे तक उनका रात दिन सतसंग करे और उनकी रहनी और गहनी और बोल चाल और ब्योहार और बर्ताव को देखे तो उस के मन में दिन २ इस बात का यक़ीन होता जावेगा कि वे ज़रूर पूरे अभ्यासी हैं और रहनी उनकी सतोगुनी है और उसका परमार्थ उनके वसीले से ज़रूर बन जावेगा सिवाय इसके और जो कोई पहिचान है वह सिवाय सुरत शब्द अभ्यासी के दूसरा नहीं परख सक्ता है क्योंकि अभ्यासी की हालत को अभ्यासी ही परख और समझ सक्ता है दूसरे की ताक़त नहीं है ॥

१२६–जो कोई पुरानी किताबों के मुवाफ़िक़ महात्माओं के लक्षण पढ़ कर किसी महात्मा या अभ्यासी की पहिचान किया चाहे तो उनको हरगिज़ पहिचान नहीं आवेगी क्योंकि जो काम क्रोध लोभ मोह और अहंकार और मन और इंद्रियों के चक्कर में आप

पड़े हैं और मालिक के भेद और उसके मिलने की जुगत से बेख़बर हैं उनकी क्या ताक़त है कि जो इन के चक्कर से न्यारे वर्त रहे हैं या इन कूवतों पर किसी क़दर सवार हैं यानी उनको अपने क़ाबू में लाये हैं उनकी हालत की थोड़ी बहुत परख और पहिचान कर सकें। ऐसे लोग हमेशा धोखा खाते हैं और धोखा खावेंगे॥

१२७—इस वास्ते सच्चे परमार्थी को मुनासिब है कि पहिले सिर्फ़ बचन की पहिचान करे यानी जिन के दर्शन और बचन और संग से कुल मालिक के चरनों में भय और भाव पैदा होवे और परमार्थ की क़द्र और बड़ाई चित्त में समावे और दुनिया और उसके सामान दिन २ ओछे और रूखे और फीके मालूम होते जावें और जिन चीज़ों और बातों में कि संसारी जीव अटके और फंसे हुए हैं उन से उसकी तबीयत आहिस्ता २ हटती जावे तो जानना और समझना चाहिये कि ऐसों के संग और उपदेश से ज़रूर एक दिन संसार और उसके बंधनों से छुटकारा हो जावेगा और परम पद और परम आनंद की प्राप्ती हो जावेगी इस से ज़्यादा हाल उनके अभ्यास और उनकी गत का जब तक कि यह आप कोई दिन अभ्यास न करेगा तब तक नहीं मालूम होगा॥

फिर उन्हीं का कोई दिन सतसंग करे और जब उनकी रहनी और बर्ताव थोड़ा बहुत देख ले

उन में अपना गुरू भाव लावे और जिस क़दर बने उनकी आज्ञा अनुसार कार्रवाई परमार्थ की करे और जिस बात में कसर पड़े उसके दूर होने के वास्ते उनकी और राधास्वामी दयाल की दया मांगता रहे, रफ़्ता २ एक दिन उसका कारज सिद्ध हो जावेगा ॥

सच्चे परमार्थी के थोड़े बहुत लक्षण और स्वभाव यहां लिखे जाते हैं ॥

१२८—हर एक परमार्थी को चाहिये कि इन लक्षणों के मुवाफ़िक़ अपने मन के हाल और चाल को परखता चलेः—

(१) परमार्थी का मन कोमल और चित्त मुलायम होना चाहिये ताकि किसी के साथ सख़्ती न करे और दुखिया का दुख तवज्जह से सुनकर जो बन सके तो अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ उसकी मदद करे नहीं तो उसकी हमदर्दी गमख़्वारी और दिलदारी करे ॥

(२) परमार्थ की चाह सच्ची होवे और सच्चे परमार्थ का खोज बराबर जारी रहे और जब उसका पता लग जावे तब बाद बिवाद और पक्षपात छोड़ कर उसको दिल से क़बूल करके जो अभ्यास कि उस के हासिल करने के वास्ते बताया जावे उसकी सच्चे मन से कार्रवाई करे ॥

(३) कुल मालिक की मौजूदगी का पूरा यक़ीन मन में होवे और उसकी भक्ती करने के वास्ते नई २ उमंग मन में उठती रहें ॥

(४) जो कोई सच्चे कुल मालिक का पता और भेद सुनावे वह शख़्स प्यारा लगे और दीनता के साथ उसका संग बारम्बार करे और उससे पूरा भेद और जुक्ती लेकर जिस क़दर जल्दी बने अभ्यास शुरू कर के अपने अंतर में थोड़ा बहुत रस और आनंद लेवे ॥

(५) क्षिमा और बरदाश्त करना उसकी आदत हो जावे और जहां तक मुमकिन होवे किसी से गुस्सा या तकरार या झगड़ा न करे ॥

(६) संसारी लोग और माया के पदार्थों से मन में किसी क़दर नफ़रत होवे यानी इनसे मिलने में मन राज़ी और ख़ुश न होवे ॥

(७) सच्चे परमार्थ की कार्रवाई में संसारी लोगों का ख़ौफ़ और शरम न करने का इरादा रक्खे और जिस क़दर बने इसी मुवाफ़िक़ बर्ताव शुरू करे ॥

(८) सच्चे मालिक की भक्ती तन मन और धन से शौक़ के साथ करने की चाह बनी रहे और जिस क़दर बन सके उसकी कार्रवाई जारी करे ॥

(९) गुरू और मालिक की प्रसन्नता की औरों की प्रसन्नता पर जहां तक मुमकिन होवे मुख्यता रक्खे ॥

(१०) मन और इन्द्रियों को शौक़ के साथ जिस क़दर बने क़ाबू में लाने का इरादा मज़बूत रक्खे ॥

(११) जो काम या चाल या रसम कि उसके परमार्थ की कार्रवाई में बिघ्नकारक होवें उनसे जिस क़दर बने बचाव करे ॥

(१२) निन्दक लोगों के वचन सुनकर विचार के साथ कार्रवाई करे और ग़ौर करके समझे और बिचारे कि उनकी निन्दा किस क़दर ग़लत और किस क़दर सही है और जो सही है उसमें क्या नुक़सान है या यह कि परमार्थी फ़ायदा उसमें किस क़दर है और जो अपनी समझ में कोई बात बख़ूबी न आवे तो प्रेमी सतसंगी से उसका हाल अलहदगी में दरियाफ़्त करके अपना इतमीनान और तसल्ली करे ॥

(१३) किसी तरह का अहंकार या मान ज़ात पाँत और धन और हुकूम और गुन वग़ैरह का अपने मन में परमार्थी कार्रवाई और सतसंग में न रक्खे ॥

(१४) अपनी कसरों और औगुनों का ख़्याल करके आप को निबल और नाचीज़ और नाकारा देखता और समझता रहे और हर एक से प्यार और दीनता के साथ बर्ताव करे और उन कसरों के दूर करने की बराबर कोशिश जारी रक्खे ॥

(१५) जहाँ तक बने ईर्षा और बिरोध और क्रोध को अपने मन में न आने देवे और किसी की बुराई भलाई दूसरे से उसकी ग़ैबत [पीठ पीछे] में न करे और न दूसरों की बुराई सुनने की आदत रक्खे ॥

(१६) बेफ़ायदा लोभ और लालच न करे और बग़ैर ज़रूरत के दूसरे से कोई पदार्थ न माँगे और न लेवे ॥

(१७) अपनी मान बड़ाई के वास्ते कोई काम दिखावे का न करे । परमार्थ में ऐसी करतूत निष्फल

समझी जाती है। जो काम या सेवा करे वह गुरू और मालिक की प्रसन्नता के वास्ते निरअहंकार और चित्त में दीनता रख कर करे॥

राधास्वामी मत के अभ्यासी को इन संजमों की सम्हाल रखना चाहिये।

१२९--जो कोई राधास्वामी मत में शामिल होवे और उसके मुवाफ़िक़ अभ्यास शुरू करे उसको यह संजम वास्ते दुरुस्ती से करने अभ्यास सुरत शब्द मार्ग के दरकार हैं:--

(१) मांस अहार न करे और न कोई नशे की चीज़ पीवे या खावे, हुक्का पीना नशे में दाख़िल नहीं है॥

(२) मामूली खाने से अहिस्ता २ क़रीब चौथाई हिस्से के कम कर देवे, और बहुत चिकने चुपड़े और स्वाद के भोजन ज़यादा न खावे॥

(३) सोने में भी कुछ कमी करे यानी आम तौर पर छः घंटे से ज़यादा न सोवे॥

(४) संसारी लोगों से ज़रूरत के मुवाफ़िक़ मेल और बर्ताव करे उनसे ज़्यादा मेल न रक्खे और बग़ैर ज़रूरत के किसी के संसारी मुआमले में दख़ल न देवे॥

(५) संसारी पदार्थ और इन्द्रियों के भोगों की चाह फ़ुज़ूल न उठावे और न उनके वास्ते फ़ुज़ूल जतन करे बल्कि जो भोग और पदार्थ मुयस्सर आवें उन

में भी जिस क़दर मुनासिब होवे इहतियात के साथ बर्ताव करे ॥

(६) वक्त अभ्यास के बेफ़ायदा ख्याल दुनिया और उसके पदार्थों और भोगों के न उठावे और जो पुरानी आदत के मुवाफ़िक़ ऐसी गुनावन मन में पैदा होवे तो उसको जिस क़दर जल्दी बने दूर हटावे नहीं तो अभ्यास में रस नहीं मिलेगा ॥

(७) सन्त पुर्ष राधास्वामी दयाल और गुरू का किसी क़दर ख़ौफ़ दिल में रक्खे और उनकी प्रसन्नता में अपनी बेहतरी समझे और नाराज़ी में नुक़सान परमार्थ और और स्वार्थ का और उनके चरनों में दिन २ प्रीत और प्रतीत बढ़ाता रहे ॥

(८) जहाँ तक मुमकिन होवे किसी जीव से बिरोध और ईर्षा दिल में न रक्खे ॥

(९) पुन्य कर्म मुवाफ़िक़ दफ़ा ८४ से ८८ तक के जिस क़दर बन सके करे और पाप कर्म से जहाँ तक बने बचता रहे ॥

(१०) राधास्वामी दयाल की दया का हर दम भरोसा मन में रखकर अपना अभ्यास नेम से हर रोज़ दो बार या ज़्यादा करता रहे और पोथियों का भी थोड़ा पाठ किया करे कि उस से अभ्यास और मन और इन्द्रियों की दुरुस्ती में मदद मिलेगी ॥

(११) सतसंग में शामिल होने का हमेशा शौक़ रक्खे और जब मौज से मौक़ा मिले तब चेत कर

होशियारी से बचन सुने और उनका मनन करके अपने लायक़ के बचन छाँट कर उनके मुवाफ़िक़ कार्रवाई और बर्ताव शुरू करे ॥

(१२) अपने मन और इन्द्रियों की चाल को निरखता चले, यानी मन की चौकीदारी करे कि नाक़िस और पाप कर्मों और ख़्यालों में न जावे और जहां तक बने मन और माया के हाथ से धोखा न खावे ॥

(१३) सच्चे परमार्थी यानी प्रेमी जन से मुहब्बत करे और जब वे मिल जावें तो शौक़ के साथ उनका संग और ख़ातिरदारी और जो मौक़ा होवे तो मेहमानदारी करे ॥

(१४) अपने वक़्त का ख़्याल रक्खे कि जहाँ तक मुमकिन होवे, फ़ुज़ूल और बेफ़ायदा कामों और बातों में मुफ़्त ख़र्च न होने पावे ॥

(१५) जब कि कुल मालिक राधास्वामी दयाल को सर्व समरत्थ और सर्वज्ञ समझा, तो जो कुछ कि स्वार्थ और परमार्थ के मुआमले में पेश आवे उसको उन की मौज समझना चाहिये और चाहे वह मन के मुवाफ़िक़ होवे या नहीं उस मौज के साथ मुवाफ़िक़त करना चाहिये यानी तकलीफ़ को धीरज के साथ बरदाश्त करना चाहिये और तरक्की यानी सुख में परमार्थ से ग़ाफ़िल होना नहीं चाहिये ॥

खुलासा कुल बचन का

१३०—जो कि यह बचन बहुत तूल यानी लंबा हो गया है इस वास्ते मुनासिब है कि इसका खुलासा थोड़ी दफ़ों में लिख दिया जावे ताकि असली मतलब इस बचन का पढ़नेवालों की समझ में जल्द आ जावे और थोड़ा बहुत याद रहे ॥

[१] राधास्वामी मत सन्त मत है

[२] राधास्वामी नाम कुल और सच्चे मालिक का नाम है ॥

[३] यह नाम किसी ने नहीं धरा इसकी धुन आप हर एक स्थान पर हो रही है यानी यह धुन्यात्मक नाम है और इसको संत और साध जन और प्रेमी अभ्यासी सुनते हैं ॥

[४] राधा नाम आदि धार का है जो कुल मालिक यानी स्वामी के चरन से निकली और स्वामी नाम शब्द का है जिस में से धुन या धार निकली और वही धुन या धार सुरत है इस वास्ते राधास्वामी नाम के अर्थ सुरत शब्द के समझने चाहियें ॥

[५] जब तक कोई इस नाम को मय इसके भेद के अपने हिरदे में नहीं बसावेगा तब तक उसको अभ्यास में मदद पूरे तौर से नहीं मिलेगी और न धुर मुक़ाम तक का रास्ता निर्विघ्न तै कर सकेगा ॥

[६] आदि धार जो राधास्वामी दयाल कुल मालिक के चरनों से निकली वही नूर और जान और शब्द

की धार है और उसी ने जगह २ ठहर कर और मंडल बाँध कर सत्तलोक तक रचना करी और फिर वहां से दो धारें ने यानी निरंजन और जोत ने उतर कर ब्रह्मांड की रचना और सहसदलकँवल से तीन धारों ने (जिनको सतोगुन रजोगुन और तमोगुन कहते हैं) उतर कर पिंड देश की रचना करी। खुलासा यह है कि कुल रचना शब्द की धार ने करी है और शब्द ही कुल मालिक का प्रथम ज़हूरा यानी प्रकाश है और सब जगह शब्द ही चेतन्य का निशान और ज़हूरा है॥

[७] शब्द की धुन या धार का नाम सुरत है और यह दोनों यानी सुरत और शब्द कुल रचना और उसकी कार्रवाई कर रहे हैं॥

[८] इस लोक में भी कुल काम शब्द (यानी बोलने वाला) और सुरत (यानी सुनने वाला) कर रहे हैं॥

[९] जब बच्चा पैदा होता है और उसने शब्द किया यानी रोया तो ज़िन्दा है और जब तक आदमी बोलता है तो ज़िन्दा है नहीं तो मुर्दा है॥

[१०] सुरत की धार उतर कर दोनों आँखों के मध्य में अन्दर की तरफ़ छठे चक्र के स्थान पर इस जिस्म यानी देह में ठहरी है और वहीं से दो धार हो कर दोनों आँखों में जाग्रत के वक्त बैठ कर इस लोक में मन और इन्द्रियों के वसीले से कार्रवाई करती है॥

[११] सुरत चेतन्य सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल की अंस है और मन निरंजन यानी कालपुर्ष या ब्रह्म की अंस है और इंद्रियां और देह माया की अंस हैं यानी उसके मसाले से बनी हुई हैं ॥

[१२] आंखों के स्थान से सुरत की धार को घर की तरफ़ यानी कुल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में विरह और प्रेम अंग लेकर उलटाना चाहिये तब सच्चा और पूरा उद्धार होगा और इसी कार्रवाई का नाम सच्चा परमार्थ है ॥

[१३] इसी उलटाने को सुरत शब्द का अभ्यास कहते हैं और असली मतलब राधास्वामी मत का यही है कि जीव यानी सुरत को जो सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल के चरनों से जुगान जुग से जुदा हो गई है और यहां देह और मन और इन्द्रियों का संग करके दुख सुख भोग रही है फिर उलटाकर उसके निज घर में जो महा प्रेम और महा आनन्द का आदि भंडार है और जहां काल कलेश और माया का बीज भी नहीं है पहुंचाना ताकि अमर अजर और महा सुखी हो जावे और जनम मरन और देहियों के दुख सुख के कलेश से उसका हमेशा को बचाव हो जावे ॥

[१४] कुल रचना के तीन दरजे हैं—पहिला निर्मल चेतन्य देश और इसी को संत देश और दयाल देश कहते हैं। यहां माया बिल्कुल नहीं है और इसी सबब से यह देश अमर और अजर है और महा सुख और

परम आनंद का भंडार है। दूसरा निर्मल चेतन्य और शुद्ध माया देश इसी दरजे के शुरू में माया का ज़हूर हुआ लेकिन इस दरजे में वह निहायत लतीफ़ है। इसको ब्रह्मांड कहते हैं। तीसरा निर्मल चेतन्य और मलीन माया देश यहां मलीनता ज़्यादा है और यहां की रचना भी इस वास्ते स्थूल है। इस दरजे को पिंड देश कहते हैं॥

[१५] जिस वक़्त पुतली आँखों की ज़रा चढ़ जाती है अदमी फ़ौरन बेहोश हो जाता है और जब ज़्यादा खिंच जाती है तब मर जाता है तो इससे ज़ाहिर है कि देही और मन और इन्द्रियों और संसार के बंधनों से छुटकारा इसी रास्ते से सुरत के उलटाने यानी चढ़ाने से मुमकिन है यानी सच्ची मुक्ती और उद्धार इसी जुगत की कमाई से मुमकिन है और किसी तरह नहीं॥

[१६] जिस क़दर बाहरमुख करनी परमार्थ के नाम से और मतों में जारी है वह असल में मुक्ती का साधन नहीं है बल्कि सब भरम है॥

[१७] और जो कोई साधन प्राणों के साथ या किसी और धार के साथ चढ़ाई का है पहिले तो वह ऐसा कठिन है कि किसी से बन नहीं सक्ता और जो किसी बिरले जीव से बन भी गया तो वह अभ्यासी माया के घेर से बाहर नहीं जावेगा क्योंकि सिवाय शब्द की धार के और सब धारें जिस क़दर कि हैं

वे ब्रह्मांड से जारी हुई हैं यानी जहाँ से कि माया का ज़हूर होकर माया और चेतन्य ने मिलकर रचना करी है। इस सबब से जो कोई इन धारों पर सवार होकर चलेगा वह माया के घेर में रहेगा और देह के बंधनों और जनम मरन से उसका छुटकारा नहीं होगा॥

[१८] माया सुरत चेतन्य की धार का खोल और ग़िलाफ़ हो रही है यानी जिस क़दर माया में सूक्ष्म और स्थूल वग़ैरह दरजे हैं उसी क़दर ग़िलाफ़ सुरत पर चढ़े हुए हैं और यही ग़िलाफ़ या खोल देही कहलाते हैं इन्हीं ग़िलाफ़ों का सुरत के बियोग यानी जुदाई से बेकार हो जाने का नाम मौत है। इस वास्ते जब तक सुरत माया के देश में रहेगी तब तक ग़िलाफ़ में रहेगी और इस सबब से जनम मरन उसका चाहे जल्दी होवे या देर से जारी रहेगा। इस वास्ते संत फ़र्माते हैं कि जब तक सुरत संत देश अथवा दयाल देश यानी निर्मल चेतन्य देश में जहाँ माया बिलकुल नहीं है न पहुंचेगी तब तक सच्चा और पूरा उद्धार न होगा॥

[१९] यह उद्धार सिर्फ़ सतगुरु और शब्द भक्ती से हो सक्ता है और किसी की भक्ती या दूसरे क़िस्म के अभ्यास से हासिल नहीं हो सक्ता है और संत मत के अभ्यासी को प्रेम और शौक़ के साथ करनी शुरू करना मुनासिब है क्योंकि बग़ैर प्रेम और शौक़ के

अभ्यास में आसानी नहीं होवेगी और जैसा चाहिये रस भी नहीं आवेगा ॥

[२०] हर एक आदमी को चाहे औरत होवे या मर्द वास्ते अपने सच्चे और पूरे उद्धार के सुरत शब्द का अभ्यास करना ज़रूर और मुनासिब है और इसी को सच्चा परमार्थ कहते हैं बाक़ी जिस क़दर बाहर-मुख पूजा और अभ्यास है जिसका अंतर से सिल-सिला नहीं लगा हुआ है वह भरम है उससे जीव का सच्चा और पूरा कल्यान नहीं होगा, अलबत्ता शुभ करम का फल मिलेगा यानी थोड़े अरसे के वास्ते सुख स्थान मिल जावेगा और जो अशुभ करम बनेगा उसकी एवज़ में दुख भोगना पड़ेगा ॥

[२१] करम का स्थान आंखों का मुक़ाम है यानी जब सुरत जाग्रत अवस्था में आंखों के स्थान पर बैठती है तब मन और इन्द्रियों से बाहरमुखी करतूत बनती है और संत फ़र्माते हैं कि जैसे बने जीव को चाहिये कि भक्ती और अभ्यास करके आंखों के स्थान से आहिस्ता २ सरकता जावे यानी ऊपर और अन्दर की तरफ़ चलना शुरू करे तो जिस क़दर चाल चलेगी उसी क़दर करम थकता और घटता जावेगा और रफ़्ता २ एक दिन यह जीव निःकर्म हो जावेगा ॥

[२२] संतो ने करम की दो क़िस्म करी हैं—एक जो इस जीव की ज़ात यानी आपे से तअल्लुक़ रखता है और दूसरा जिसका तअल्लुक़ औरों के साथ

ब्यौहार में हैं। पहिलो क़िस्म यह है कि जिस करतूत करके यह जीव अपने मालिक के नज़दीक पहुंचता जावे वह असली यानी परमार्थी शुभ कर्म है और जो करतूत कि इसको अपने मालिक के चरनों से दूर डाले वही असली यानी परमार्थी अशुभ कर्म है। दूसरी क़िस्म यह है कि औरों के साथ मन बचन और कर्म करके इस तरह बर्ताव करे कि जैसे यह जीव चाहता है कि और लोग इसके साथ बर्ताव करें। यह ब्यौहारी शुभ कर्म है और इसके ख़िलाफ़ बर्ताव करना ब्यौहारी अशुभ कर्म है। परमार्थी जीवों को मुनासिब है कि ऊपर के क़ायदे के मुवाफ़िक़ अपने ज़ाती और ब्यौहारी करम का दुरुस्ती से बर्ताव करें॥

[२३] और मतों में बाहरमुखी करम का बहुत बिस्तार किया है सबब इसका यह है कि सच्चे और कुल मालिक की भक्ती की रीति और महिमा उनको मालूम नहीं हुई और न सुरत शब्द अभ्यास की ख़बर हुई कि जिसमें जीव बहुत जल्द करम के घेर से निकल कर अपने निज घर की तरफ़ जा सक्ता है और जो करमों के बखेड़े में पड़ा रहा तो चाहे उससे ब्यौहारी शुभ कर्म बने या अशुभ उसका हिसाब काल और माया के संग कभी बेबाक़ नहीं हो सक्ता है और इस वास्ते जनम मरन और दुख सुख के फंदे से रिहाई मुमकिन नहीं है॥

[२४] जिन मतों में कि सिर्फ़ बाहरमुखी पूजा या

पोथियों का पढ़ना और पढ़ाना जारी है और घट के भेद से बेख़बरी है उनकी कुल कार्रवाई ब्यौहारी शुभ या अशुभ करम में दाख़िल है उससे मुक्ती हासिल नहीं हो सक्ती ॥

[२५] और जिन मतों में थोड़ा अन्तर अभ्यास जारी है और वह वर्णात्मक नाम का सुमिरन या ध्यान किसी देवता या औतार या परमेश्वर का या मुद्रा का साधन है और स्थान उस अभ्यास का छः चक्र के अंदर है और संतों के धाम का भेद मालूम नहीं है तो भी वह सच्ची मुक्ती का साधन नहीं है अलबत्ता सुख स्थान कुछ काल के वास्ते मिलेगा और फिर जनम मरन के चक्कर में आना पड़ेगा ॥

[२६] जो लोग कि ज्ञानी या वेदान्ती या सूफ़ी कहलाते हैं और अपने को ब्रह्म मानते हैं पर कोई अभ्यास ब्रह्म पद में पहुंचने का नहीं करते और न भेद से ब्रह्मपद और उसके रास्ते से वाक़िफ़ हैं, यह भी जनम मरन के चक्कर से नहीं बच सक्ते। ऐसा ज्ञान वाचक कहलाता है । बग़ैर मन और सुरत की चढ़ाई के (संतों के अभ्यास के मुवाफ़िक़) हालत नहीं बदल सक्ती और न ब्रह्मपद की प्राप्ती हो सक्ती है क्योंकि प्राणायाम का अभ्यास बसबब उसकी कठिनता के ख़ारिज है और कोई दूसरे अभ्यास से यह मतलब हासिल नहीं हो सक्ता और यह वाचक ज्ञानी और सूफ़ी अपनी विद्या और बुद्धी के अहंकार में संतों

का बचन नहीं मानते इस सबब से ख़ाली रह गये ॥

[२७] नास्तिक और और मत जो विद्यावानों ने जारी किये हैं इन में तो कोई परमार्थी बात नहीं है सिर्फ़ पर-उपकार का उपदेश है और कुल मालिक की मौजूदगी से इनकार है। फिर यह लोग क्या भक्ती और अभ्यास कर सक्ते हैं इस वास्ते इनका उद्धार किसी तरह मुमकिन नहीं है ॥

[२८] रचना का हाल ग़ौर से नज़र करने से साफ़ ज़ाहिर होता है कि कोई कुल और सच्चा मालिक ज़रूर है क्योंकि हर एक चीज़ से कारीगरी और मतलब और इरादा समरत्थ बनाने वाले का ज़ाहिर है और यह जीव उसी कुल मालिक समरत्थ दयाल की अंस है यानी उसका और जीव का जौहर एकही है। फिर जो लोग कि इस बात को नहीं मानते हैं वे अपना भारी नुक़सान करते हैं और अंत को बहुत पछतावेंगे ॥

[२९] जो लोग कि तीरथ बरत और मूरत मंदिर और औतारों और देवताओं की पूजा में अटक रहे हैं और घट के भेद और संत मत की जुक्ती से बेख़बर हैं और न उसकी तलाश और खोज करते हैं उनका भी सच्चा उद्धार नहीं हो सक्ता। वे करम का फल अलबत्ता पावेंगे पर सच्चे मालिक के दरबार में नहीं पहुंच सक्ते बल्कि उस औतार और देवता के असल रूप का भी जैसा कि उसके लोक में है दर्शन

नहीं मिलेगा क्योंकि अपनी ज़िन्दगी में असल का खोज नहीं किया फिर मरने के बाद भी नक़ल का ही दर्शन पावेंगे बशर्ते कि सच्ची लगन और किसी क़दर प्रतीत के साथ मूरत की पूजा करी होगी और जो रसमी परमार्थ के तौर पर कार्रवाई की है तो नक़ली रूप की भी प्राप्ती नहीं होगी ॥

[३०] सच्चे परमार्थी को चाहिये कि भेदी और अभ्यासी गुरू खोज कर और उनकी थोड़ी पहिचान करके सुरत शब्द मारग के अभ्यास में लग जावे और जो संजम कि बताये गये हैं उनके मुवाफ़िक़ कार्रवाई अपनी दुरुस्त करता जावे तब जो कुछ कि बचन संतों ने कहे हैं उनकी तसदीक़ अंतर में वह आप करता जावेगा और कुल मालिक की दया भी अपने अंतर में परखता जावेगा। इस तरह उसकी प्रीत और प्रतीत चरनों में दिन २ बढ़ती जावेगी और एक दिन अपने मालिक के चरनों में पहुंच जावेगा ॥

॥ इति ॥